शैल-सूत्र

ISSN 24558966
वर्ष 15 अंक: 4, अक्टूबर–दिसम्बर 2022

हिमाचल देव परम्परा विशेषांक

हिमाचल सरकार को शैलसूत्र परिवार की हार्दिक बधाई

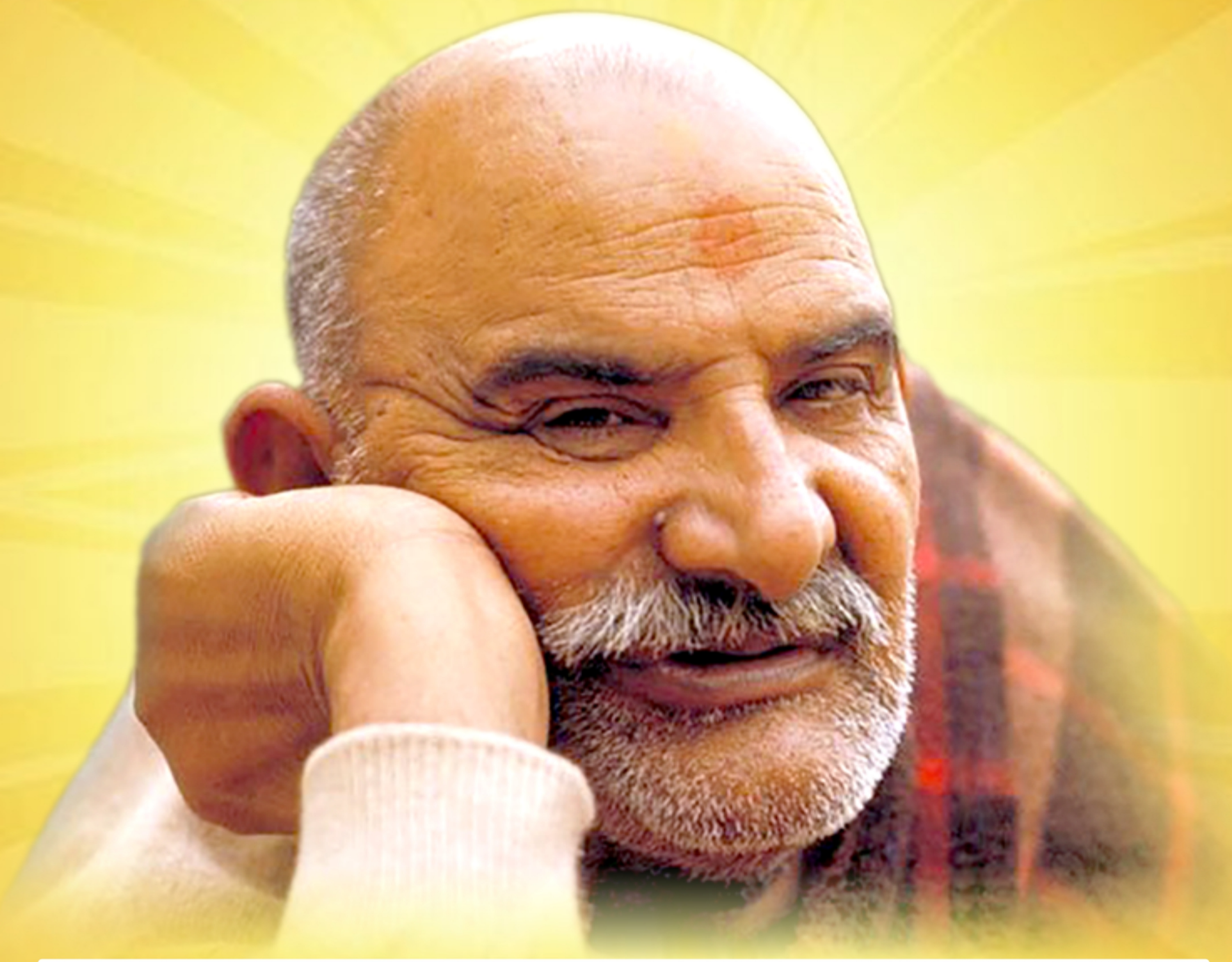

पंजाब प्रेस क्लब जालन्धर में आयोजित पंजाब कला संस्कृति अकादमी के वार्षिक कार्यक्रम में अकादमी के संस्थापक और अजीत समाचार (हिन्दी) के सम्पादक श्री सिमर सदोष को उत्तराखण्ड के साहित्यकारों की ओर से सम्मानित किया गया

सम्पादन परामर्श
डॉ. प्रभा पंत-09411196868
सम्पादक
आशा शैली -9456717150, 8958110859 7055336168,
सह सम्पादक/समन्वयक
चन्द्रभूषण तिवारी -9415593108/8707467102
सह सम्पादक/शोध प्रबंधक
डॉ. विजय पुरी-09816181836
पवन चौहान-09805402242
विधि-परामर्श
प्रदीप लोहनी-09012417688
प्रचार सचिव
डॉ. विपिन लता 9897732259

1.शैल-सूत्र में प्रकाशित रचनाओं के प्रति सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं।
2.लेखक अपने विचार प्रेषण के लिए स्वतन्त्र है।
3. शैलसूत्र परिवार के सभी सदस्यों के पद अवैतनिक हैं।
4.प्रत्येक कानूनी विवाद का निपटारा पत्रिका के सम्पादकीय कार्यालय का विधि क्षेत्र होगा।

शुल्क, खाता सं 024110100000073, कोड सं. IFSC; AUCB 0000025 अल्मोड़ा अर्बन बैंक, शाखा लालकुआँ अथवा भारतीय स्टेट बैंक शाखा तरुवाला, पाँवटा साहब (हि.प्र.) कोड सं. IFSC; SBIN 0000703 खाता सं 30116574461 में जमा करायें।

मूल्य-एक प्रति 25/-,
वार्षिक 100/-,
आजीवन 1000/-,
संरक्षक सदस्य 5100/-

पत्रिका शैलसूत्र का यह अंक कला संस्कृति एवं भाषा अकादमी हिमाचल के आर्थिक सहयोग से प्रकाशित

परामर्शः-

डॉ. श्यामसिंह 'शशि' -09818202120,
डॉ. धनंजय सिंह -09810685549,
डॉ. रूपचन्द्र शास्त्री 'मयंक', 07906360576

मुख्य संरक्षक :- डॉ. बुद्धिनाथ मिश्र-09412992244/7060004706

संरक्षक **सदस्यः-** शिव बाबू मिश्र -09412750094, अर्श अमृतसरी -07011758133, डॉ. नवीन कुमार श्रीवास्तव -9212444369, प्रकाश चन्द्र लोशाली -9456114762, डॉ. शीना 9249932945, राजकुमार जैन 'राजन' 09828219919, केशव कुमार पटेल-9919352975, डॉ. विमला व्यास-9452780735, डॉ. शीला त्रिपाठी-9453257279, बृजेश चन्द्र श्रीवास्तव -9451023854, अरविंद कुमार यादव -9125628814, श्रीमती ममता पाण्डेय-9453770833, मौजी लाल पटेल-9936380977, ए.के. पवार-9810059715, डॉ. ए.जे. अब्राहम- 9447375381, **डॉ. श्रीमती उषा मिश्रा-9450610608, श्री चंदन प्रताप सिंह -7317559999, श्री सर्वेश सिंह शौनक-7007164024, श्री रूप चन्द शर्मा -9935353480,** राम मूरत चौहान-**9415885622,** डॉ. नीतिका नैन -9536379106, राकेश कुमार कुशवाहा -8318525500, हिमांशु कुमार तिवारी-9335183600, मनोज कुमार मिश्र-9935422927, संजीव कुमार मिश्र-9340581505, वीरेंद्र कुमार मिश्र-8287985767

विशेष सहयोगी

पंकज बत्रा -9897142223, सत्यपाल सिंह 'सजग' -09412329561, राधेश्याम यादव -80066722221, (लालकुआँ), निरुपमा अग्रवाल -9412463533, निर्मला सिंह -9412821608, (बरेली), दर्शन 'बेज़ार'-आगरा -9760190692, डॉ. राकेश चक्र -9456201857, (मुरादाबाद), सूरत भारती, (हि.प्र.) -09418272934, कृष्णचन्द्र महादेविया, (मण्डी हि.प्र.) -09857083213, डॉ. वेदप्रकाश प्रजापति 'अंकुर' (हल्द्वानी) -9412943042,

सम्पादकीय कार्यालय एवं पत्र व्ययवहार का पता-
-साहित्य सदन, इन्दिरानगर-2
पो.-लालकुआँ, जिला-नैनीताल (उत्तराखण्ड) पिन-262402
मो.-09456717150, 7055336168,
Email-asha.shaili@gmail.com

स्वामी, प्रकाशक, तथा मुद्रक आशा शैली (इन्दिरा नगर-2, लालकुआँ, जि. नैनीताल) ने एच.जे. इंटरप्राइजेज़, खानचन्द मार्केट, हल्द्वानी (नैनीताल) से मुद्रित कराया। सम्पादक आशा शैली (इन्दिरा नगर-2, लालकुआँ, जि. नैनीताल-262402)

विधा	लेखक	पृष्ठ
वैचारिकी	**-चन्द्रभूषण तिवारी**	**03**
सम्पादकीय		**04**
आलेख		
स्पिति का बुछैन लोकनाट्य	-सुदर्शन वशिष्ठ	05
धरोहर: गाँव पांगणा: ऐतिहासक सिंहावलोकन	-डॉ.हिमेन्द्र बाली	12
ऐतिहासिक लोक मान्यता- बनाम : भगत-राम दास और माता बालासुन्दरी शक्ति पीठ	-चिर आनन्द	16
देवता : जिनके बगैर हर कार्य अधूरा है	-पवन चौहान	18
लिप्पा गोम्पा: इतिहास, लामाओं की वंशावली और खुनु लोतो	-नेम चन्द ठाकुर	20
कहानी:- हेसण	-देवकन्या ठाकुर	25
स्मार्टफोन	-डॉ विजय कुमार पुरी	31
लघुकथा: बुखार	-डॉ उमेश प्रताप वत्स	34
अपने तो अपने होते हैं	-सारिका चौरसिया	35
काव्यधारा		
मुझे बोनसाई नहीं होना	-राजकुमार जैन राजन	36
स्मृति	-डॉ. लता अग्रवाल 'तुलजा'	36
गीत: मार्ग संत्रासी हुआ है	-कृष्ण कुमार 'कनक	**37**
कविता:	-सत्यपाल सिंह सजग	**37**
ग़ज़लें		
रवि कान्त अनमोल, डॉ.आलोक कुमार यादव		38
डॉ. राजेंद्र सिंह 'साहिल', डॉ. नलिन, अदीक्षा देवांगन 'अदी'		39
गीत:		
प्रिय पधारो प्रेम-पथ पर	-बृज राज किशोर 'राहगीर'	**40**
कविता: आगे दौड़ पीछे चौड़	-जितेन्द्र 'कबीर'	40
संस्मरण: किन्नौर और लाहुल स्पीति	-डॉ. वी.के. शर्मा	41
बाल पहेलियाँ:	-कमलेंदु कुमार श्रीवास्तव	45
नन्हीं कलम:		
कविता:		
चींटियाँ -कु. रूपाली, रिश्तों का अहसास-कु. सारिका		**46**
तेलणी की धार में बसा देव माहुंनाग का मंदिर	-कुमारी आँचल	**47**
समीक्षा :अद्भुत गंध बिखेरती कहानियाँ :कस्तूरी मृग	-डी.एस. भागटा	48
साधना से किया साकार: चाँद पर लाजो	-डॉ. विजय कुमार पुरी	50

प्रयागराज (इलाहाबाद) और हिंदी साहित्य का स्वर्ण युग-5

-चन्द्र भूषण तिवारी

हरिवंशराय बच्चन उत्तर-छायावाद के प्रमुख कवि थे और उनकी कई कविताओं में, उनका प्रयागराज प्रेम और गंगा-यमुना के तट का सुंदर चित्रण पढ़ने को मिलता है। जीवन सौंदर्य, प्रकृति प्रेम, देहाती स्वर, ये उनके काव्य की विशेषतायें रही हैं जो पाठक को भाव विभोर करती हैं।

बच्चन जी प्रयागराज के अकादमिक और साहित्यिक जगत के साथ साथ नेहरु-गांधी परिवार के निकट होने के कारण राजनैतिक बैठकों का हिस्सा भी बन चुके थे। भारत की आज़ादी के बाद, बच्चन, भारत सरकार के विदेश मंत्रालय में हिंदी के विशेषज्ञ रहे। बच्चन को सन 1968 में साहित्य अकादमी पुरस्कार और सन 1976 में पद्मभूषण से सम्मानित किया गया। बच्चन ने चार खंडों में अपनी आत्मकथा लिखी है जिसमें अंतिम खंड का नाम 'दशद्वार से सोपान तक' है। प्रयागराज में, दशद्वार उनके उस घर का नाम था जहाँ वे किराए पर रहते थे उपेन्द्र नाथ अश्क़, हिंदी और उर्दू के प्रसिद्ध कथाकार और उपन्यासकार थे। सन 1910 में जालंधर, पंजाब में जन्मे उपेन्द्रनाथ, पहले उर्दू लेखक के रूप में उभरे पर बाद में सन 1932 में मुंशी प्रेमचंद के कहने पर हिंदी में लेखन आरम्भ किया। प्रेमचंदोत्तर साहित्य को उपेन्द्रनाथ अश्क़ ने बहुत अच्छे से सम्भाला और सँवारा। गिरती दीवारें, शहर में घूमता आइना, सितारों का खेल, आदि इनके प्रमुख उपन्यास हैं। इन्होंने कई कहानी संग्रह, नाटक, संस्मरण, एकांकी संग्रह, आलोचना, इत्यादि स्वयं प्रकाशित किये और उनके लिए इन्हें बहुत ख्याति भी मिली। सन 1972 में इन्हें सोवियत लैंड नेहरु पुरस्कार से सम्मानित किया गया। सन 1926 में, प्रयागराज के अतरसुइया मोहल्ले में जन्मे धर्मवीर भारती ने उच्च शिक्षा इलाहाबाद विश्वविद्यालय से ही प्राप्त की और यहीं से हिंदी के विख्यात साहित्यकार एवं इतिहासकार डॉ. धीरेंद्र वर्मा के निर्देशन में सिद्ध-साहित्य पर शोध किया।

धर्मवीर भारती ने 'संगम' पत्रिका का सह-सम्पादन इलाचंद्र जोशी के साथ किया और बाद में हिंदुस्तानी अकादमी में अध्यापक नियुक्त हो गये। जीवन के अंतिम चरण में, धर्मवीर भारती, लम्बे समय तक मशहूर साप्ताहिक पत्रिका 'धर्मयुग' के सम्पादक भी रहे। भारती के उपन्यास 'गुनाहों का देवता', 'सूरज का सातवाँ घोड़ा', 'प्रारम्भ व समापन', आदि आज भी सदाबहार उपन्यासों की श्रेणी में गिने जाते हैं। इनके नाटक 'अंधा युग' की क्लासिकल नाटकों में गिनती होती है। इनके संस्मरणों में इलाहाबाद की भयानक गर्मी, बारिश और इस शहर की विचित्र जीवन शैली का विस्तृत चित्रण देखने को मिलता है। इनको सन 1972 में पद्मश्री से सम्मानित किया गया था।

द्विवेदी युग से लेकर उत्तर-छायावादी युग तक प्रयागराज साहित्य-सेवा का केंद्र था। प्रयागराज समग्र हिंदी साहित्य का वह तीर्थ स्थल था जिसने आधुनिक हिंदी साहित्य को उसका स्वर्ण युग दिखाया । प्रयागराज का साहित्यिक इतिहास बहुत विस्तृत है और साहित्यकारों की लम्बी सूची को एक लेख में समेट पाना लगभग असंभव काम है।

प्रयागराज के समकालीन हिन्दी साहित्यकारों में ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित अमरकान्त का नाम उल्लेखनीय है। उपेन्द्रनाथ अश्क़ के पुत्र, नीलाभ अश्क़, कवि कैलाश गौतम, दूधनाथ सिंह, नंदल हितैषी, आदि ने हिंदी साहित्य में एक अलग स्थान बनाया है।

समाप्त

उस पर ध्यान मत दीजिए जो आपकी पीठ पीछे बात करते हैं, इसका सीधा-सा अर्थ है कि आप उससे दो कदम आगे हैं.... प्रेषक चन्द्र प्रभा सूद

सम्पादकीय

नया साल, नई उमंगें और नये रास्ते सामने हैं

हालांकि अभी नया तो कुछ भी नहीं! न नई फसल, न नया मौसम, न कुछ और हाँ बस फिर भी सन् 2022 बीत ही गया इसके साथ ही पत्रिका ने अपनी यात्रा के पन्द्रह वर्ष पूरे कर लिए हैं। समय को तो अपनी रफ्तार से चलना है। प्रिय-अप्रिय सभी स्मृतियों को साथ लेकर चलना हमारी बाध्यता है। इस बार पत्रिका के विलम्ब का कारण आर्थिक है। साहित्यिक पत्रिकाएँ ऐसे संकट से सदैव जूझती हैं, यह कोई नई बात नहीं। कई बार होता यह है कि अधिकारी स्वीकृति देकर सहयोग नहीं कर पाते, जैसे चुनाव प्रक्रिया लागू होने के कारण आचार संहिता का लग जाना आदि। अस्तु

सचिव हिमाचल कला संस्कृति एवं भाषा अकादमी की मैं समस्त शैलसूत्र परिवार सहित हृदय से आभारी हूँ कि एक नया विषय सुझाकर पत्रिका का मार्ग दर्शन किया और मैं कुछ मित्रों के सहयोग से पाठकों के सामने इस अंक में कुछ अलग सामग्री परोस पाई। मुझे यह देखकर बहुत अच्छा लगा कि हमारी भावी पीढ़ी भी पूरे दमखम के साथ साहित्य के क्षेत्र में आगे बढ़ रही है। हिमाचल की देव परम्परा पर लिखना सरल कार्य नहीं है, परन्तु एक नन्हीं कलम (कुमारी आँचल) ने इस दायित्व का भी निर्वाह किया है जिसे आप इस अंक में देखेंगे। हिमाचल के सभी प्रबुद्ध लेखक वर्ग का आभार व्यक्त करती हूँ, जिन्होंने अपनी सशक्त लेखनी से इस अंक को गरिमा प्रदान की। अंक को पटल पर रखते हुए आशान्वित हूँ कि मैं अपने पाठक वर्ग को शायद संतुष्ट कर पाऊँगी।

नया वर्ष सभी के लिए सुखदायी होने की कामना करती हूँ और परमपिता परमेश्वर से यही कामना करती हूँ कि शेष बची साँसों तक कार्य करने की शक्ति प्रदान करे। इस अंक के साथ ही आपकी पत्रिका वेवसाइट पर भी दिखाई देने लगेगी।

नया वर्ष कोरोना को भी एक बार पुन: साथ लेकर आया है। सभी मित्रों, शुभचिंतकों से सावधानी की अपेक्षा है। सभी के सुखी और चिन्तारहित जीवन की ईश्वर से कामना है। ऐसे ही समय में पुस्तक मेला फिर आ रहा है। कुछ नई आशाओं के साथ, कुछ नई संवेदनाओं के साथ आगे बढ़ते हुए।

आशा शैली

स्पिति का बुछैन लोकनाट्य

–सुदर्शन वशिष्ठ

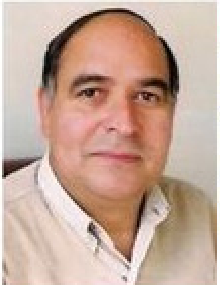

बुछैन को आम लोक भाषा में बु-ज़्हेन भी कहा जाता है। इसे तिब्बती भाषा में 'फोर-बर-दो-चोग' कहते हैं जिसका अर्थ है: 'अमाश्य पर पत्थर फाड़ खेल' या अनुष्ठान। यूँ तो 'बुछैन' लोकनाट्य स्पिति में अन्य स्थानों में भी खेला जाता है किंतु इस का मुख्य केन्द्र स्पिति की पिन घाटी है। यहाँ के गाँव सगनम में अभी भी बुछैन के कलाकार विद्यमान हैं। पिन घाटी कुल्लू और बुशहर के बीच एक संकरी घाटी है जहाँ आसपास ऊँची-ऊँची पर्वत शृंखलाएँ हैं। दुर्गम स्थान और बिल्कुल अलग थलग रहने के कारण यहाँ की परंपराएँ अभी भी जीवित हैं। 'बुछैन' में एक पूरा नर्तक दल रहता है जो गाँव-गाँव में चमत्कारी खेल दिखाता है। ये लोग गाँव-गाँव जा कर पूरे अनुष्ठान के साथ नाटक, नृत्य और अपने चमत्कारों के द्वारा ग्रामीणों को रिझा कर अपनी आजीविका चलाते हैं। ये अपने इलाके तक ही सीमित नहीं रहते बल्कि दूर-दूर जा कर भी अपने खेल दिखाते हैं। किन्नौर, लाहौल, लद्दाख और जंस्कर तक जा कर ये अपने खेल दिखाते हैं। इनके खेल दिखाने का कोई समय निश्चित नहीं है किंतु फसल कटने पर अपने करतब दिखाना इन्हें लाभकारी रहता है क्योंकि उन दिनों इन्हें खेल दिखाने के बदले अनाज आदि भेंट में मिल जाता है।

अब इन कलाकारों की संख्या बहुत कम रह गई है। स्पिति में बुछैन परंपरा सदियों से चली आ रही है। यह परंपरा किसी समय लद्दाख में भी प्रचलित थी। परन्तु अब समाप्त हो चुकी है। स्पिति में भी धीरे-धीरे यह समाप्त हो रही है।

माना जाता है कि इस अनोखे अनुष्ठान का जन्म तिब्बत में हुआ। इसके जन्मदाता महासिद्ध थंग-तोंग-ग्यलपो (मरूस्थल का राजा) माने जाते हैं। इनका जन्म चौदहवीं शताब्दी में हुआ। कहा जाता है एक बार इस क्षेत्र में सूखा पड़ गया जिसके कारण अकाल-सी स्थिति हो गई। तरह तरह की बीमारियाँ फैलने से लोग काम करते हुए, घास काटते हुए, खाना खाते हुए और यूंही बैठे बैठे मरने लगे। लोगों में त्राहि-त्राहि मच गई। राजा ने कई हकीम वैद्य बुलाए किंतु कोई उपचार न कर पाया। अब लोगों ने भगवान बुद्ध से प्रार्थना की जिसके फलस्वरूप स्वयं अवलोकितेश्वर ने थंग-तो-ग्यलपो के रूप में जन्म लिया। इन्होंने सूखे और अकाल करने वाले दानवों को बुछैन अनुष्ठान कर के समाप्त किया।

दूसरी आस्था के अनुसार नवमी शताब्दी में शासक लड्.दर्मा बौद्ध धर्म का विरोधी हो गया। उसने पूरे तिब्बत से धर्म का नाश करने की ठान ली। लामाओं को मारना आरम्भ कर दिया। उस समय कोई भी व्यक्ति मन्त्र का पाठ नहीं कर सकता था। लामाओं तथा लोगों ने प्रार्थनाएँ आरम्भ कर दीं जिसके फलस्वरूप त्रिलोकीनाथ की चाड्-रे-ज़िग ने धरती पर अवतार ले कर थंग तोंग ग्यलपो के रूप में जन्म लिया। राजा के धर्मविमुख होने के कारण सारी प्रजा भी नास्तिक हो गई थी। कोई धर्म की बात सुनने के लिए तैयार न था। थंग तों ग्यलपो ने अपना एक नाट्य दल बनाया और घूम-घूमकर धार्मिक अनुष्ठान के साथ चमत्कार दिखाने आरम्भ किए जिससे लोग उनकी ओर आकर्षित हो सकें। चमत्कारों के बीच में ये लोग धर्म का प्रचार भी करने लगे। इससे लोग पुन: अपने धर्म की ओर प्रवृत्त हुए। समय के अनन्तर इन लोगों का यह पेशा बन गया और ये जगह जगह अपने करतब दिखाने लगे।

तीसरे मत के अनुसार चौदहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में ल्हासा के राजा र्जे-रिबयो-छे-खापा (1357-1419) के शासन में एक दानव ने आतंक मचा दिया। उसके प्रकोप से राज्य में बीमारियाँ फैलने लगी। लोग परेशान हो गए। वे अपना काम करते हुए, खाना खाते हुए, सोते हुए ही मरने लगे। वैद हकीम, जादू टोने का इलाज करने वाले लामा हार गए। ऐसे समय में किसी ने राजा को बताया कि एक थंग-तोंग-ग्यलपो नाम के चमत्कारी सिद्ध हैं जो एक गोम्पा बना रहे हैं। वे गोम्पा का निर्माण करते तो रात को दानव उसे गिरा देते। वे दिन में पुल बनाते तो रात को दानव उसे बाढ़ से बहा देते। राजा ने थंग-तोंग-ग्यलपो के पास अपने दूत भेजे और उन से ल्हासा आ कर अपने राज्य को बचाने का अनुरोध किया। थंग-तोंग-ग्यलपो ने राजा कर अनुरोध स्वीकार कर लिया और श्वेत पूंछ वाले गरूड़ की सवारी पर ल्हासा पहुँच गए। यहाँ आ कर

उन्होंने पेट के आकार का एक पत्थर तलाशा। उस पत्थर में दानवों की आत्मा डाल दी। एक पत्थर खंजर के आकार का लिया और मन्त्र द्वारा एक ही प्रहार से बड़े पत्थर के टुकड़े टुकड़े कर दिए। पत्थर जब टूटा तो जोर से चीखा। यह सब उन्होंने लोगों और दरबारियों के सामने किया। सब के सामने चमत्कार दिखा कर थंग-तोंग-ग्यलपो ने दानव को मार भगाया।

कहा जाता है थंग-तोंग-ग्यलपो का जन्म साधारण किसान परिवार में हुआ। ये छः भाई-बहनों में पाँचवें थे। इनका बचपन का नाम ठोवो पल्दन था। बचपन में इन्हें शिक्षा दीक्षा के लिए गोम्पा में भेजा गया। मेधावी होने के कारण इन्होंने शीघ्र ही भोटी भाषा और व्याकरण का ज्ञान अर्जित कर लिया। बाद में उसी गोम्पा में अनके वर्षों तक एकान्त में साधना की। तन्त्र की शिक्षा ग्रहण करने के उपरांत इन्होंने भारत तथा नेपाल के तीर्थ स्थलों की यात्रा की। नेपाल में इन्होंने कुछ स्तूपों की जीर्णोद्धार किया। अट्ठारह वर्षों तक ये नेपाल और बोधगया में भ्रमण करते रहे। बोधगया में धर्म श्रवण किया और विशेष सिद्धि प्राप्त की।

एक बार ल्हासा जाते हुए इन्हें नदी पार करनी थी। अतः नाव में सवार हुए किंतु इनके पास नाविक को देने के लिए किराया नहीं था। इस पर नाविक ने क्रोध में इनके सिर पर पतवार का वार कर इन्हें नदी में फैंक दिया। इस घटना से दुखी होकर इन्होंने नदी पर पुल बनाने का संकल लिया। तिब्बत में ऐसी कई नदियाँ थीं जिन के पार जाने को पुल नहीं थे। अतः इन्होंने तिब्बत के तीनों प्रान्तों, अरुणांचल और भूटान जा कर धन एकत्रित किया। अंततः सत्तर वर्ष की आयु में इन्होंने सन् 1430 में लोगों के सहयोग से ल्हदोड़् शलखर में एक पुल का निर्माण करवाया। इस तरह इन्होंने लगभग अट्ठावन पुलों का निर्माण करवाया। जब ल्हासा के राजा ने इन्हें बुलावा भेजा तब भी इन की प्रसिद्धि पुल बनवाने वाले साधक के रूप में फैली हुई थी।

पुलों के साथ साथ थंग-तोग-ग्यलपो भगवान बुद्ध की धातु की मूर्तियाँ बनवाने के लिए भी प्रसिद्ध रहे। कई गोम्पाओं में मूर्तियों के साथ साथ भीति चित्र भी बनवाए। इन में साधना कक्ष स्थापित करवा कर कंग्यूर और तंग्यूर को स्वर्णाक्षरों में लिपिबद्ध करवाया।

सी.जी. ब्रूस द्वारा बुछैन का वर्णन: ऊपर वर्णित है कि लद्दाख, जंस्कर, लाहौल, स्पिति और किन्नौर तक बुछैन का खेल प्रचलित रहा है। सन् 1912 में एक यूरोपियन अधिकारी सी.जी. ब्रूस ने लाहौल के एक आखिरी गाँव दो ज़म में इस खेल का प्रदर्शन देखा। यहाँ गर्मियों में बाजार लगता था जिसमें तिब्बत से ऊन, पशम, नमक आदि बेचने के लिए लाया जाता और तिब्बती यहाँ से अनाज, बरतन और कपड़े आदि ले जाते। सी.जी. ब्रूस ने इस अवसर पर यहाँ इस खेल की जादूई ढंग से समाप्ति पर हैरानी प्रकट की। उन्होंने उल्लेख किया है, ''आरम्भ में प्रार्थना के बाद एक बुजुर्ग पीठ के बल लेट गया जिस के पेट पर एक भारी पत्थर रख दिया गया। उस पत्थर पर एक आदमी तब तक प्रहार करता रहा जब तक कि वह टूटा नहीं। यह कृत्य बड़ी सफाई से किया गया।'' ब्रूस ने आगे उल्लेख किया है कि ''दर्शक चारों ओर अर्धवृत बना कर यह खेल देख रहे थे। खेल समाप्त होने पर नर्तक लामा पीतल के वाद्य झांझ को थाली की तरह दर्शकों के आगे कर घूमा। ब्रूस साहब ने इस में एक रूपये का सिक्का डाला और उनके सहायक चंद्र सिंह ने एक दुअन्नी डाली।'' यह देख कर ब्रूस साहब हैरान रह गए कि बाकी दर्शकों ने केवल एक-एक सूई ही डाली। सम्भवतः इस क्षेत्र में सूई भी एक महत्वपूर्ण चीज रही होगी। यहाँ कई क्षेत्रों में सूई एक दुलर्भ वस्तु थी जो व्यापार के समय अनाज के बदले भी ली जाती थी।

जॉर्ज डी. रेरिख द्वारा बुछैन का वर्णन: जार्ज डी. रेरिख ने इस खेल को सर्वाधिक सम्मान प्राप्त और इसके पात्रों को दिव्य शक्ति से सम्पन्न माना है। उन्होंने लिखा है कि इस खेल का कभी कभार ही प्रदर्शन किया जाता है। इस खेल का प्रारम्भ दुष्टात्माओं के दमन के लिए हुआ जिसने पत्थरों के टुकड़ों में अपना आवास बना लिया था। अतः इसे तिब्बती में 'फ़ो-वर-दो-चोग' अर्थात् छाती पर पत्थर तोड़ने का खेल कहा जाता है।

रेरिख को इस नाट्य को लाहौल प्रवास के दौरान दो बार देखने का अवसर मिला। इस नाट्य को स्पिति से आए घुमन्तू लामाओं ने प्रदर्शित किया जिन्हें बुछैन कहते हैं। महायोगी थंग-तोंग-ग्यलपो एक बौद्ध मठ का निर्माण करवा रहे थे कि बहुत से अपशकुन होने लगे। दिन में जो निर्माण कार्य हो पाता था, रात को उसे दुष्टात्मा गिरा देते थे। इस गोम्पा को पूरा करने के लिए पहली बार बुछैन का अनुष्ठान किया गया जिससे बौद्ध मठ का निर्माण

ठीक ढंग से चल सका। एक लोहे के पुल के निर्माण के समय भी ऐसा ही हुआ। नदी का जल स्तर बढ़ जाता और पुल का निर्माण नहीं हो पाता। अत: दूसरी बार बुछैन का आयोजन किया गया जिसके बाद पुल के निर्माण का कार्य अबाध गति से चल पड़ा।

एक बार ल्हासा में एक दुष्टात्मा 'जा दुद' के प्रकोप से लोगों में बीमारियाँ फैल गईं। अत: थंग-तोंग-ग्लपो को बुलवाया गया जो श्वेत पूँछ वाले गिद्ध पर सवार हो पहुँच गए। उस समय दुष्टात्मा प्रवेश द्वार की दहलीज में छिप कर बैठी थी। ल्हासा नगर में इस पत्थर को सभी लोगों के सामने खुले में रखा गया। थंग-तोंग-ग्यलपो ने उस पत्थर को एक अन्य छोटे पत्थर से तोड़ दिया। इस पत्थर को तोड़ने के लिए किए जाने वाले बारह प्रयासों की चर्चा की गई है। तेरहवीं बार भी पत्थर न टूटे तो अपशकुन माना जाता है। इसके बाद इसे चौराहे में रख कर एक सौ बालकों द्वारा शोर मचाते हुए एक सौ लौहारों या आठ नवयुवकों द्वारा तुड़वाया जाता है।

इसके बाद रेरिख द्वारा पूरे अनुष्ठान का वर्णन किया है जिस में पत्थर पूजन, बुछैन का मन्त्रजाप और नृत्य, चरवाहे का प्रवेश और लोगों को हँसाना, तलवारों का पेट में चुभोना, पत्थर तोड़ना आदि समस्त क्रियाओं का वर्णन किया है। रेरिख ने लिखा है : "मेरे सामने जिन लामा नर्तकों ने इस विशेष आयोजन में भाग लिया, उनकी छाती असामान्य रूप से बलिष्ठ थी और उनके शरीर बहुत शक्तिशाली थे। इस अनुष्ठान के बाद 'पी-वङ्.' के संगीत के साथ नृत्य आरम्भ हो जाता है। पी-वङ्. का मुख्य अभिनेता वाद्य बजाता है। नृत्य के साथ लोकप्रिय गीत भी गाए जाते हैं।"

सन् 1920 के गजेटियर में भी उल्लेख है कि प्रत्येक लामा का पुत्र बुछैन बनता था। पिन घाटी के लोग छोटे-छोटे नाट्य दल बना कर बुछैन का प्रदर्शन कर अपनी आजीविका चलाते थे। वे गाँव गाँव ठहर कर धार्मिक कथाएँ सुनाते हुए इस नाट्य का प्रदर्शन करते थे।

स्पिति की पिन घाटी, जो इस नाट्य का केन्द्र रही है, यहाँ सन् 1917 में उन्नीस परिवार इस नाटक को कर रहे थे। अभी तक यहाँ कुछ नाट्य दल शेष हैं जो बाकायदा काम कर रहे हैं। इस घाटी के गाँव खर, गुलिङ्, लितिंङ्, मुद तथा सगनम में बुछैन नाट्य दल अभी भी विद्यमान हैं। बुछैन बौद्ध धर्म की यिंङ्मा या शंगपा शाखा से निकला है। इस का मुख्य केन्द्र या स्थान गुलिङ् में माना जाता है।

बुछैन के जनक: इन सब धार्मिक और कल्याणकारी कार्यों के अलावा थंग-तोंग-ग्यलपो को बुछैन नाट्य परंपरा का जनक माना जाता है। इन्होंने सात बहनों की एक नाट्य मण्डली तैयार की। जगह जगह नाट्य का प्रदर्शन कर ये पुल बनाने के लिए धन एकत्रित करते थे। ये एक कुशल वैद्य, लोहार, अभियंता भी थे। थंग-तोग-ग्यलपो की मृत्यु सन् 1485 में तिब्बत के चङ्. प्रांत में हुई मानी जाती है।

नाटक का एक दृश्य: पुरातन परंपरा का प्रारम्भ

थंग-तोंग-ग्यालपो ने इस लोक नाट्य का प्रारम्भ तिब्बत से किया। चौदहवीं शताब्दी में मणिपा लामाओं

द्वारा 'ऊं मणि पद्मे हूं' का जाप करते हुए इस नाट्य की प्रस्तुति की जाती थी। मणिपा लामाओं ने तिब्बत में दीवारों पर कई कथाओं को चित्रों के माध्यम से प्रदर्शित किया। इन कथाओं में धार्मिक और नैतिक शिक्षा भी दी जाती थी। थंग-तोंग-ग्यलपो का शिष्य बुछैन कहलाता था। मणिपा लामा और बुछैन में मुख्यत: अंतर यह है कि बुछैन मणिजाप के साथ अंत में छाती पर पत्थर तोड़ने का प्रदर्शन भी करते थे। इन्होंने इस परंपरा को जारी रखा। आधि, व्याधि, प्राकृतिक आपदा, दैविक आपदा, दानवी आपदा, अकाल, अनावृष्टि आदि विघ्नों को दूर करने के लिए ये लोग अनुष्ठान करने लगे।

इस नाट्य का दूसरा उद्देश्य जनता में बौद्ध धर्म के प्रति आस्था, निष्ठा और विश्वास जगाना है। इस नाट्य को मनोरंजन का एक साधन बनाने के साथ धर्मनिष्ठ बनाया ताकि अत्याचारी और धर्मविरोधी राजा के होते हुए भी धर्म का प्रचार हो सके। बौद्ध धर्म के मन्त्रोच्चारण,

धार्मिक कथाओं के प्रवचन के साथ तान्त्रिक और चमत्कारपूर्ण कृत्यों से इस नाट्य ने धर्म का ह्रास होने से रोका।

बुछैन की दीक्षा: बुछैन परंपरा हर कोई नहीं निभा सकता। यह पैतृक परंपरा है जो पीढ़ी दर पीढ़ी सीखने से आगे चलती है। बुछैन अपने पुत्र को बाल्यावस्था से ही भोट भाषा सिखाता है। स्पिति घाटी में लामाओं को विवाह करना वर्जित नहीं है। बहुत बार लोग अपने कनिष्ठ पुत्र को लामा बनाने के बजाय बुछैन बनाना पसंद करते हैं। बुछैन का इष्टदेव अवलोकितेश्वर है जिसकी पूजा पद्धति विधि विधान से सिखाई जाती है। मुख्य बुछैन को भी लामाओं की तरह पूरे संस्कार निभाने पड़ते हैं। लगभग सात वर्ष की आयु में ही उसे गुरू के पास ले जा कर धर्म कर्म, साधना की बातें सिखाई जाती हैं। इन्हें बुछैन में किए जाने वाले गीति नाट्य कण्ठस्थ कराए जाते हैं, नाट्य में प्रयोग किए जाने वाले वाद्य यन्त्रों का अभ्यास करवाया जाता है और विभिन्न कथाओं की व्याख्या करनी भी सिखाई जाती है। इसके बाद युवा होने पर इन्हें एकांत वास में रह कर विशेष साधना करने का भी विधान है। लो सुम, छोस सुम नाम से साधना तीन वर्ष, तीन माह, तीन दिन तक करनी होती है। इस साधना में एक लाख मन्त्रजाप, एक लाख साष्टांग् प्रणाम, एक लाख मंडलार्पण तथा एक लाख गुरूयोग पूजा आदि की साधनाएँ करनी पड़ती हैं।

मुख्य बुछैन को लोछैन भी कहा जाता है। इसे 'मे-मे बुछैन' भी कहा जाता है। बुछैन में मुख्य बुछैन के अतिरिक्त वेनपा और तीन यूनपा अर्थात् श्रावक होते हैं। वेनपा को हास्य कलाकार के रूप में भूमिका निभानी पड़ती है अत: इसे हास्य संचार करने के गुणों से परिपूर्ण होना आवश्यक है। शिक्षा दीक्षा पूरी करने के बाद इस दल को अपनी कला का प्रदर्शन समस्त दर्शकों के समक्ष प्रस्तुत करना हाता है।

बुछैन अनुष्ठान का आयोजन: बुछैन का मुख्य क्षेत्र या केन्द्र अब स्पिति की पिन घाटी है। इस घाटी में सगनम के साथ साथ सोलह गाँव है जिनमें यह परंपरा बची हुई है।

परंपरागत उत्सव के रूप में मनाए जाने का प्रारम्भ नवम्बर में होता है। सबसे पहले थंग-तोंग-ग्यलपो की मूर्ति की स्थापना की जाती है। यह अनुष्ठान पिन घाटी के मुद गाँव से आरम्भ होता है। नाट्य मण्डली के स्वागत हेतु सभी ग्राम वासी खतग (लामाओं को दिया जाने वाला सफेद मफलर अथवा सम्मान सूचक वस्त्र), दूध, दही और मदिरा भी लिए रहते हैं। ये भेंट सब बुछैन को दी जाती है। इनके ठहरने का प्रबन्ध किसी सम्पन्न घर में किया जाता है। ग्राम वासी भी अपनी अपनी श्रद्धा और क्षमता के अनुसार इन की आवभगत व खान-पान का प्रबन्ध करते हैं।

नाटक का प्रारम्भ रात्रि को भोजन के बाद होता है। सर्वप्रथम शंख बजा कर इसके प्रारम्भ की सूचना दी जाती है जिससे लोग इकट्ठे हो जाते हैं। अब मणि जाप किया जाता है । बुछैन मणिजाप के साथ अपने लाए चित्रों के बारे में बताते हैं। इन चित्रों में पद्म होदबर, डोवा सड्मो, ग्यलबु नोरसड् आदि की जीवनियाँ होती हैं। ग्रामीण इन लोगों से ज्ञान बातें बड़े ध्यान से सुनते हैं। मणिजाप पूरा होने पर ग्रामीण अपने साथ लाई सामग्री इन लोगों को भेंट स्वरूप देते हैं।

पारंपरिक वाद्य: मंच चयन, मूर्ति स्थापना तथा पात्रों की वेषभूषा इस लोक नाटक के लिए विशेष मंच की अपेक्षा नहीं रहती। गाँव के प्रांगण में किसी भी खुले स्थान में यह नाटक खेला जा सकता है। इसके लिए बारह फुट का स्थान पर्याप्त रहता है। इस स्थान या मंच को 'छोद मचृम' या 'तोगरा' कहा जाता है। मंच के पीछे या कभी-कभी बीच में थंग-तोंग-ग्यलपो' की मूर्ति स्थापित कर दी जाती है। यह मूर्ति अष्टधातु से निर्मित होती है। इन की मूर्ति एक वृद्ध साधक की मूर्ति होती है जो पालथी मारकर साधना में बैठा है। सिर पर श्वेत जटाएँ और मुकुट, हाथ आगे की ओर जंघाओं पर। ये हाथ में 'छे-बुम' अर्थात् अमृत का पात्र लिए हुए होते हैं। इन्हें प्राय: श्वेत वस्त्र धारण किए दिखाया जाता है। इस मूर्ति के साथ दो और मूर्तियाँ स्थापित की जाती हैं जिनमें एक अवलोकितेश्वर की और दूसरी द्रीमेभ-कुंदनमथर की होती है। इन मूर्तियों को भी श्वेत वस्त्र में लपेट कर रखा जाता है। थंग-तोंग-ग्यलपो की प्रतिमा के बाईं ओर एक त्रिशूल रखा

जाता है, दूसरी ओर घण्टी। प्रतिमा के चारों ओर सात कटोरियाँ रखी जाती हैं जिनमें जौ, धूप, पुष्प, जल आदि रखा जाता है। सामने एक दीपक जला कर रखा जाता है। अब कई जगह स्थायी मंच भी बन गए हैं।

मुख्य पात्र बुछैन जिसे लो-छेन भी कहा जाता है, सिर पर पाँच रंगों की टोपी या पगड़ी पहनता है। इस टोपी को तिब्बती में 'फोद-का' कहते हैं। स्थानीय बोलियों में इसे 'थोद', 'दरमिज़े' भी कहा जाता है। टोपी के पाँच रंग पाँच दिशाओं के द्योतक माने जाते हैं। पूर्व का सफेद, पश्चिम का लाल, उत्तर का नीला, दक्षिण का पीला और आकाश का हरा। ये पाँच रंग उस मुकुट के प्रतीक हैं जो बोद्धिसत्व को सिद्धि प्राप्त होने पर मिले। बुछैन के कानों में चांदी के आभूषण होते हैं जिन्हे 'पंदप' कहा जाता है। वह एक लम्बा चोगा पहनता है जो रेशम के रंगीन कपड़ों से बनाया जाता है और जिसकी बाहें हाथों से बाहर तक लम्बी होती हैं। इसके ऊपर वह एक 'तोंगा' नाम का वस्त्र पहनता है और नीचे टांगों में गहरे लाल रंग का ऊनी घाघरा। ऊपर का वस्त्र 'किरा' नाम के रंगीन धागों से बने कमरबंद से बंधा रहता है। पैरों स्थानीय जूता जिसे 'ल्हम' या 'ट्रेदपा' कहते हैं। इस जूते का तला याक की खाल से बना होता है।

पत्थर तोड़ने की क्रिया के समय बुछैन एक कपड़ा 'पुंग्खप' पीठ पर लटकाता है जो सूईयों से कन्धों पर बान्ध दिया जाता है। पत्थर को सफलतापूर्वक तोड़ने के लिए अभिमन्त्रित और तान्त्रिक अष्टघातु से निर्मित एक आभूषण भी मन्त्रोच्चारण के साथ पहनाया जाता है जिसे 'दोर्जे-फुरफा' कहते हैं। इसमें, ऊपरी भाग में तीन देवी की मूर्तियाँ तथा निचले भाग में भैरव की मूर्ति बनी होती है। इसे एक सौ आठ मनको की बनी माला पहनाई जाती है। मूंगा और मणियों से जड़ा एक हार भी पहनाया जाता है। चांदी और शंख से बना एक और आभूषण 'थोंगा' भी गले में डाला जाता है।

वेनपा को छोड़ अन्य कलाकारों की वेषभूषा बुछैन की तरह ही होती है किंतु वे बुछैन की तरह आभूषणों से सुसज्जित नहीं होते। कई बार अन्य कलाकार साधारण कपड़े ही पहनते हैं। वे सिर पर लम्बी टोपी पहनते हैं जिसे 'लिंगज़िमा' कहा जाता है। शरीर पर खाल पहनते हैं और नीचे ऊनी तंग पायजामा। वेनपा या विदूषक गडरिए की भूमिका में फटे पुराने वस्त्र पहनता है ताकि अपनी वेषभूषा से भी वह दर्शकों को हँसा सके।

वाद्य यन्त्रः बुछैन में वाद्य यन्त्रों का बहुत महत्व है। वाद्य यन्त्रों की ध्वनि से ही पता चलता है कि यह नाटक आरम्भ हो रहा है। सबसे पहले शंख बजाया जाता है जो दूर दूर तक गाँवों में खेल के आरम्भ होने की सूचना देता है। शंख को 'तुग' कहा जाता है।

लामाओं का महत्वपूर्ण यन्त्र 'माणे' है। इसे 'माणे' या 'मणि खोर लो' भी कहा जाता है। मन्त्र जाप के समय इसे हाथ में घुमाया जाता है। यह ताम्बे या चांदी से बनाया जाता है। इसके भीतरी भाग में जाप किया जाने मन्त्र 'ऊं मणि पद्मे हुं' खुदा होता है। नीचे एक लकड़ी की डण्डी हाथ में पकड़ने के लिए बनी होती है। इसके साथ एक घण्टी लगी रहती है। संतुलन बनाने के लिए एक धातु का टुकड़ा जंजीर से बंधा रहता है। इस चक्र को 'ऊँ मणि पद्मे हुं' का उच्चारण करते हुए दाएँ हाथ से क्लॉक वाइज़ घुमाया जाता है। मन्त्रोच्चारण के समय एक चक्र पूरा होने पर घण्टी बजती है। यूं तो इसे वाद्य की श्रेणी में नहीं रखा जा सकता किंतु प्रारम्भिक मन्त्र जाप के लिए यह महत्वपूर्ण है।

वाद्य यन्त्रों में प्रमुख वाद्य का नाम 'बुगज़ल' है। कांसे का बना हुआ यह एक बड़े आकार का बाहर को उभरे हुए थाल की तरह का वाद्य है। बाहर के उभरे भाग में पकड़ने के लिए धागे लिकले रहते हैं जहाँ से इसे पकड़ कर दोनों को टकरा कर ध्वनि निकाली जाती है। यह वैसे भी एक महत्वपूर्ण वाद्य है जो गोम्पाओं में पूजा के समय तथा छम्म नृत्य के समय बजाया जाता है। यह देर तक गूंजने वाली ध्वनि उत्पन्न करता है। कांसे का ही एक और वाद्य 'ट्रिल व दोरजे' कहलाता है जो घण्टी से थोड़ा भिन्न और बड़ा होता है। इस में बोधिसत्व और बौद्ध साधकों के चित्र उकेरे होते हैं। डमरू का प्रयोग भी इस नाटक में किया जाता है। ये डमरू दो होते हैं, छोटे को 'दरू' और बड़े को 'दरछेन' कहा जाता है।

एक ओर महत्वपूर्ण और पुरातन वाद्य 'कोपों' कहलाता है। अखरोट की लकड़ी से निर्मित इस वाद्य के सिरे पर तूम्बा बना होता है। तूम्बे को बकरे की खाल से मढ़ा जाता है। तूम्बे के दूसरे सिरे पर सिंह मुख बनाया जाता है। इस सिरे पर धागा कसने के लिए छः खूंटियाँ बनी होती है। इन खूंटियों में बकरी की आंत का बारीक धागा कसा जाता है। इस धागे को दूसरे सिरे पर लगी एक

कील से कस दिया जाता है। धागों के बीच हाथीदांत या हड्डी की बनी घोड़ी रख दी जाती है। इस तरह यह एक वीणा की तरह का साज बन जाता है जिस पर विभिन्न स्वर लहरियाँ पैदा की जा सकती हैं। इसी तरह का मगर छोटे आकार का वाद्य 'पियांग' कहलाता है। इसमें बकरी की आंत के धागों की जगह तारें या घोड़े के बाल लगाए जाते हैं।

बौद्ध मंदिरों में प्रयुक्त एक वाद्य 'कंगलिंग' का प्रयोग भी बुछैन के समय किया जाता है। यह वाद्य भूत पिशाच, डाकिनी और प्रेतात्माओं से बचाव के लिए बजाया जाता है। यह एक महत्वपूर्ण और तान्त्रिक प्रयोग में लाया जाने वाला वाद्य है। इसे बनाने की विधि भी अजीब है। इसे गर्भवती मृत महिला की टांग की हड्डी से बनाया जाता है। किसी पुरुष या महिला गायक की युवा अवस्था में मृत्यु हो जाने पर महिला की बाईं और पुरुष की दाईं टांग की हड्डी निकाल इसे तन्त्र विधि से खोखला किया जाता है और यह वाद्य यन्त्र बनाया जाता है। इसे मुँह से फूंक द्वारा बजाया जाता है। इसे बौद्ध गोम्पा में तथा बुछैन के समय तान्त्रिक वाद्य के रूप में प्रयाग किया जाता है।

उक्त विशिष्ट वाद्यों के अतिरिक्त बांसुरी जिसे 'लियूं' कहा जाता है, शहनाई जिसे 'सुत्ना' कहा जाता है और नगारा जिसे 'दामेन' कहा जाता है, बुछैन के समय बजाए जाते हैं। **वेनपा अर्थात् विदूषकः** बुछैन एक विध्नहारी और कल्याणकारी कृत्य है। यह प्रतिदिन किया जाता है जब तक बुछैन उस गाँव में रहते हैं। बुछैन के दिन प्रातः ही एक लम्बा पत्थर ला कर रख दिया जाता है जिस के ऊपर जौ या गेहूं से स्वास्तिक चिह्न बनाया जाता है। रात्रि को इसी स्थान पर शंख ध्वनि करने के बाद एकत्रित होना होता है। वेनपा अर्थात् विदूषक की भूमिका सबसे पहले आती है। मणि जाप के बाद वेनपा अर्थात् विदूषक एक गडरिये का रूप धारण कर आता है। इस पात्र को लुगज़ी यानि गडरिया या चरवाहा कहा जाता है। इसके हाथ में पत्थर फेंकने के लिए युगदो होता और कन्धे पर टूटा फूटा थैला। लोगों के हँसाने के लिए यह व्यक्ति उल्टे कपड़े या उल्टी खाल पहनता है। चेहरे पर सत्तू का लेप लगाकर अपनी मुद्राएँ हँसी लाने वाली बनाता है। पीठ पर टूटी फूटी टोकरी उठाए रस्सा बाटता हुआ गाने गाता है जिससे लोगों का भरपूर मनोरंजन हो सके। बुछैन वेनपा धर्मकर्म के प्रश्न पूछता है तो ये उल्टे सीधे जबाब देकर लोगों को हँसाता है। इसने अपनी टोकरी में गुंधे हुए 'च़ाम्-पा' अर्थात् स तू रखे होते हैं जिन्हें उंगलियों में घुमाकर कई प्रकार की व्याख्याएँ करता है और अंत में देवताओं को अर्पित करने के बाद उसे खा जाता है। चोगे से बोतल निकाल कर छंग (स्थानीय शराब) पीता है और मतवाला होने का अभिनय करता है। दर्शकों को भी छंग पीने को देने का अभिनय करता है। वह भोटी, हिन्दी और स्थानीय बोलियों में बात कर हँसाने की कोशिश करता है। थैले से उल्टा-सीधा सामान निकाल कर बुछैन को कहता है कि तुम्हारी पत्नी ने तुम्हें कुल्लू मनाली से तोहफा भेजा है। कई बार यह एक वनमानुष की तरह भी व्यवहार करता है। इसे मिर्गोद अर्थात् आदि मानव और शिकारी भी कहते हैं। अंत में बुछैन इस का शमन करता है।

मुख्य खेलः बुछैन द्वारा तरह-तरह के हैरतअंगेज करतब दिखाना इस नाटक का मुख्य अंग है। नाटक के मुख्य पात्र को बुछैन या लो-छैन कहते हैं। वेनपा के अलावा इस नाट्य में दो या तीन कलाकार होते हैं जिन्हें बु-छुडू कहा जाता है। नाटक प्रस्तुति के समय बुछैन केवल अधोवस्त्र सा पहन कर आता है। वह केवल अपने आभूषण पहने रखता है। पीठ पर लाल-पीले ध्वज, सिर पर रंग बिरंगे कपड़े लपेटे जाते हैं। दोनों बाहों में सूईयाँ चुभो कर दोनों गालों के बीच भी लम्बी सूई चुभोई जाती है। इस बीच वाद्य यन्त्र बजते रहते हैं। दोनों हाथों में एक नुकीली तलवार ले कर उसकी नोक पर पेट के बल लेट कर करतब दिखाया जाता है। दर्शक मन्त्रजाप करते हुए हैरानी से इस करतब को देखते हैं। एक यंनपा अर्थात् श्रावक को नग्न कर उसके पेट पर तीन बार काले रंग का एक चिह्न लगाया जाता है। उसे दुष्टात्मा के रूप में मान कर उसके पेट पर तीन बार तलवार का वार किया जाता है। इसके बाद होता है पत्थर तोड़ने का प्रदर्शन। यह विघ्न निवारण का प्रदर्शन है। पहले वह मन्त्रोच्चारण करता हुआ पत्थर की परिक्रमा करता है। बार बार पत्थर के सामने झुकता है। एक पात्र से चारों ओर जौ फेंकता है। लो-छैन के प्याले में छंग भरी जाती है। वह उसे पत्थर के चारों ओर पाँच बार गिराता है। इसके बाद पत्थर के सामने खड़ा कोई प्रार्थना करता है। प्रस्तुत ग्रामीणों में किसी को बुला कर जमीन पर लिटा दिया जाता है और उसके पेट पर पतला सा कपड़ा बिछा कर पत्थर रख दिया जाता है। इस पत्थर को बुछैन पेट पर ही तोड़ता है। पत्थर यदि

पहले प्रहार से टूट जाता है तो शुभ माना जाता है। यदि दो तीन प्रयासों में भी पत्थर न टूटे तो किसी दूसरे व्यक्ति को लिटा कर पुनः पत्थर तोड़ने का प्रयास किया जाता है।

पत्थर के टूटते ही देवता की जय जयकार की जाती है। पत्थर का टूटना अशुभ पर शुभ, अमंगल पर मंगल और दुष्टात्माओं पर देवताओं की विजय मानी जाती है। एक प्रहार से पत्थर टूटने को 'धर्मकाय' माना जाता है। दूसरे प्रहार से टूटने पर 'सम्भोगकाय', तीसरे पर 'निर्माणकाय', चौथे पर 'चतुर्दिशा स्वामी', पांचवें पर 'पंच ध्यानी बुद्ध', छठे पर 'शष्ठ दिशा बुद्ध' सातवें पर 'सात बुद्धों का समूह', आठवें पर 'अष्ट संगत', नौवें पर 'नव धर्म सिद्धांत', दसवें पर 'दस रूपी गुरू', ग्यारहवें पर 'ग्यारह सिरों वाला अवलोकितेश्वर', बारहवें पर 'धरती माता के बारह रूप' और तेरहवें पर 'वज्रधर' कहा जाता है। तेरह बार प्रयास करने पर भी पत्थर न टूटे तो माना जाता है कि अब महान् विनाशकारी और कष्टकारी समय आने वाला है। अब इस पत्थर को किसी चौराहे पर रख दिया जाता है। अब इसे सौ लोहारों द्वारा एकसाथ प्रहार कर, आठ नवयुवकों द्वारा प्रहारकर तोड़ा जाता है। बुछैन द्वारा पत्थर के टूटने पर ग्रामीण पत्थर के टुकड़ों को उठाने के लिए दौड़ते हैं। ग्रामीण इन टुकड़ों को घास रखने की जगह में रखते हैं जिससे घर में दूध-घी की वृद्धि होती हैं। इसे घरों में मादक पेय बनाने के पात्र में भी रखा जाता है। विश्वास है कि इससे मदिरा और मादक एवं स्वादिष्ट बनती है।

अब बुछैन को लोग घर से लाए जौ, अनाज, सत्तू, घी और रुपये पैसे भेंट करते हैं। बुछैन वाद्य बजाता है और सभी नृत्य करने लगते हैं। बुछैन इस समय अश्लील शब्दों का भी प्रयोग करता है ताकि दुष्टात्माएँ गाँव से भाग जाएँ। नाटक की समाप्ति पर बुछैन दूसरे गाँव की ओर प्रस्थान करते हैं। एकत्रित ग्रामीण उन्हें अपने गाँव की सीमा तक छोड़ने जाते हैं। दूसरे गाँव के लोग उन का स्वागत करते हुए अपने गाँव में श्रद्धापूर्वक ले जाते हैं। इस तरह यह नाटक गाँव-गाँव में दिखाया जाता है ताकि गाँव से दुष्टात्माओं को भगाया जा सके और सारी विघ्न बाधाओं का नाश हो। यह भी परंपरा है कि यदि बुछैन पिन घाटी के अंतिम गाँव तक न पहुँच पाएँ तो अगले वर्ष उसी गाँव से नाटक की शुरूआत होगी।

स्पिति की पिन घाटी में तो यह परंपरा जीवित है ही, किन्नौर, लद्दाख और लाहौल में भी यह पंरपरा निभाई जाती है। अब घरों में भी सुख समृद्धि के लिए बुछैन दलों को आमन्त्रित किया जाता है। कई जगह फसल कटाई से पहले जब छम्म नृत्य होता है, इसके साथ अंत में बुछैन भी करवाया जाता है। अब विवाह, किसी शुभ कार्य, मेले उत्सव में भी बुछैन होने लगा है। वार्षिक मेलों जैसे लदारचा उत्सव, किनौर तथा केलंग में जनजातीय उत्सवों में भी बुछैन का प्रदर्शन किया जाता है। स्कूल, कॉलेज के समारोहों में भी बुछैन नाटक किया जा रहा है जो एक अच्छी परंपरा है और इससे यह नाट्य जीवित रह सकेगा।

बुछैन बनने के समय जाप, मन्त्रोच्चारण, तथा कथाएँ: बुछैन एक विचित्र परंपरा रही है जिस में कई तरह से मन्त्रजाप, मन्त्रों का लाख-लाख बार उच्चारण तथा कई कथाएँ सुनाने का प्रचलन रहा है। बुछैन बनना कोई साधारण या आसान क्रिया नहीं है। इसमें कई साधनाओं से हो कर गुजरना पड़ता है जो बहुत कठिन हैं।

मन्त्र जाप: बुछैन में सर्वप्रथम इस परंपरा के संस्थापक थंग-तोंग-ग्यलपो की प्रतिमा के समक्ष एक लाख बार मस्तक झुका कर मन्त्र जाप करना होता है। यह मूल मन्त्र 'ऊँ मणि पद्मे हुं' है। 'मणि खोर लो' या मणिचक्र हाथ में लिए हुए, उसे घुमाते हुए यह जाप किया जाता है। दाएँ हाथ में मणि चक्र और और बाएँ हाथ में 'ठङ्वा' अर्थात् माला ले कर मंच पर स्थातिप मूर्तियों के सामने यह जाप किया जाता है। इसलिए बुछैन को 'मणिपा' भी कहा जाता है। इस क्रिया को 'छाग-बुम' कहा जाता है।

प्रार्थना में गुरू लामा को नमस्कार किया जाता है। गुरू तथा आध्यात्मिक सत्ता, अवलोकितेश्वर और थंग-तोंग ग्यल्पो के प्रति निष्ठावान होने की प्रार्थनाएँ की जाती हैं। इस प्रार्थना के बाद लो-छैन शंख बजा कर खेल आरम्भ करने का संकेत देता है। एक बड़ा पत्थर ला कर रख दिया जाता है। इस पत्थर पर लो-छेन एक मानव आकृति बनाता है जो दुष्टात्मा की प्रतीक है। इसे धूप दीप दिखा कर इसके चारों ओर नृत्य किया जाता है। सभी वाद्य यन्त्र बजाए जाते हैं। नृत्य धीरे धीरे आरम्भ हो तेज होता जाता है। नर्तक दाएँ-बाएँ घूमते हुए पूरा चक्कर लगाते हैं। जब बुछैन तलवार की नोक पर नाभि के सहारे शरीर का पूरा भर डाले खड़ा होता है, उस समय भी एक गीत गाया जाता है। यह गीत सुरीला और लम्बा होता है जिसका अर्थ इस प्रकार है:

''हे दयालू धर्मात्मा, जगत् गुरू! तू सूर्य और चाँद के सिंहासन पर बैठा, जो हमारे सिर का ताज है, हम सब को अच्छी तरह से जानता है। हम अनुपम शंख-गृह में, जो हमारी खोपड़ी है, पचास 'खाग-थुङ' दैवी शक्तियों की पूजा करते हैं। हम अपने कण्ठ की मधुर ध्वनि से छह अक्षर के 'ॐ मणि पद्मे हुं' मन्त्र द्वारा प्रार्थना करते हैं। हम विधि के स्रोत चक्र में, जो हमारा वक्ष है, उस दयालू महान् संरक्षक की प्रार्थना करते हैं। हम हर्षोल्लास के स्रोत चक्र में, जो हमारी नाभि है, पाँच प्रकार की डाकनियों की पूजा करते हैं। हम सम्भोग कार्य में, जो हमारे शरीर का गुप्तांग है, र्दोर्जे-ग्ज़ोन-नु कर प्रार्थना करते हैं। हम चार भुजाओं युक्त देह से, जो हमारा शरीर है, पवित्र शांत देवता की पूजा करते हैं। हम शरीर के अट्ठाईस जोड़ों में, जिनसे मेरूदण्ड बनता है, अट्ठाईस दैवी शक्तियों के स्वामी की प्रार्थना करते हैं। हम 'ॐ मणि पद्मे हुं' का जाप करते हैं।'' पत्थर तोड़ने से पूर्व के चमत्कारी खेलों में यह महत्वपूर्ण प्रार्थना है।

बुछैन द्वारा कथाओं का प्रदर्शनः बुछैन को अपने प्रदर्शन के समय कई कथाओं का सहारा लेना पड़ता है क्योंकि उसे इन कथाओं को सुनाने और इनका नाट्य रूपांतर करने की आवश्यकता पड़ती है। विभिन्न धार्मिक कथा कहानियों, जातक कथाओं को उसे नाटक के समय सुनाना और प्रदर्शन करना पड़ता है। अतः मुख्य पात्र बुछैन को एक लामा की तरह पठन पाठन करना होता है। उसके घर में इन कथाओं की पोथियाँ विद्यमान रहती हैं। बौद्ध महापुरुषों की जीवनियाँ, जातक कथाएँ तथा कई प्रसिद्ध प्रसंग इनके नाटक की कथावस्तु बनते हैं।

कहानियों में 'दय लोग नाग सा होन बुम', 'दय लोग लिंगज़ा छोए किद','दय लोग सांगे छोए ज़ोम', 'उग्र्यन डिमेद कुनदन', 'डम-ज़े ज़ुग की यिंमा', 'छोए ग्यल युन रल वा', खिंऊ पदमा होद बर', डुगपा कुन्लेग', 'दोचा मोचा', जुड़पो दोन योद' आदि कथाओं का प्रयोग इस नाटक में किया जाता है। इन कथाओं में पुर्नजन्म, महान् साधकों के अतिरिक्त 'मिला रेपा' जैसे कवियों की कहानी भी कही जाती है।

''अभिनंदन'' कृष्ण निवास,
लोअर पंथा घाटी, शिमला-171009
94180-85595

धरोहर गाँव पांगणाः ऐतिहासक सिंहावलोकन

-डॉ.हिमेन्द्र बाली

पश्चिमी हिमालय की तलहटी में, हिमाचल प्रदेश के केन्द्र में अवस्थित मण्डी की वैदिक व पौराणिक पृष्ठभूमि रही है। प्रचलित मान्यताओं के अनुसाार मण्डी का नामकरण मण्डप ऋषि से आविर्भूत हुआ है। जब शिव-पार्वती का पाणिग्रहण संस्कार मण्डी में हो रहा था तभी शिव सृष्टि के किसी कार्य के प्रयोजन से अन्यत्र चले गये। काफी अंतराल तक शिव के न आने से माता पार्वती व्यग्र हो उठीं। तभी विवाह मण्डप से एक ऋषि प्रकट हुए उन्होंने शिव की अनुपस्थिति में ही विवाह संस्कार की परम्परा को सम्पन्न किया। मण्डप से प्रकट होने के कारण वे मण्डप ऋषि के नाम से विख्यात हुए। उन्हीं लब्धप्रतिष्ठ ऋषि के नाम पर ही क्षेत्र का नाम मण्डप से मण्डी में परिणत हुआ। ऐसी भी मान्यता है कि मण्डी में माण्डव ऋषि का आश्रम था। आज भी वैदिक नदी ब्यास के किनारे माण्डव्य ऋषि की तपश्चर्या की प्रतीक शिला इस मान्यता को प्रमाणित करती है। मण्डी नगर, जिला मण्डी का मुख्यालय भी है। प्राचीन काल में उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्र को यारकन्द, काशगर व मध्य एशिया को जोड़ने वाला व्यापारिक मार्ग मण्डी नगर होते गुजरता था। अतः मण्डी का नामकरण व्यापारिक स्थल होने के कारण व्यापारिक स्थल मण्डी नाम से विख्यात हुआ। मण्डी के दक्षिण में स्थित सुकेत क्षेत्र के अंतर्गत पौराणिक गाँव पांगणा अवस्थित है जो सुकेत की प्राचीन राजधानी रहा है। सुकेत प्राचीन काल में सुकुट नाम से प्रसिद्ध था। महाभारत में सुकेत को सुकुट नाम से अभिहित किया गया है। सुकेत नाम का आविर्भाव द्वैपायन व्यास के आबाल पुत्र शुकदेव की तपस्थली के कारण हुआ। लोक मान्यता के अनुसार सुकेत का नामकरण शुक क्षेत्र अथवा सुक्षेत्र से निष्पन्न माना जाता

है। अत:सुकेत क्षेत्र प्राचीन काल से धर्म, संस्कृति व राजनीतिक गतिविधियों का केन्द्र रहा है। पांगणा के समीपस्थ पजैरठी में ऋग्वेद की ऋचाओं के प्रणेता विमल ऋषि के आश्रम का होना क्षेत्र के वैदिक सम्बंधों को प्रमाणित करता है। पांगणा का नामकरण पाण्डवांगन से हुआ माना जाता है। लोक मान्यता के अनुसार पाण्डव लाक्षागृह की घटना के बाद छद्म भेष में कुछ समय तक पांगणा में रहे। अपने प्रवास के दौरान पाण्डव माता कुन्ती के साथ विचरण करते रहे। पाण्डव यहाँ प्रस्तर शिलाओं पर चौसर का खेल खेला करते थे। प्रमाण के लिए पाण्डवों द्वारा चौसर खेल के लिये प्रयुक्त शिलाओं पर रेखीय उत्कीर्ण आज भी विद्यमान है। पाण्डवों की क्रीड़ास्थली होने के कारण पाण्डवांगन कालांतर में पांगणा नाम से लोकप्रिय हुआ। यहीं पाण्डु पुत्र भीम का विवाह हिडिम्ब की बहिन हिडिम्बा से यहाँ के प्रतिष्ठित अम्बरनाथ शिव मंदिर में सम्पन्न हुआ था। चूंकि उस काल में पांगणा का क्षेत्र कुल्लू के अनार्य शासक हिडिम्ब के अधीन था। हिडिम्ब की भीम के हाथों मृत्यु के बाद हिडिम्बा कुल्लू गणराज्य की शासिका बनी। हिडिम्बा पर्वतीय गणराज्यों में कुल्लू गणराज्य की एकमात्र महिला शासिका थी। कालांतर में हिडिम्बा ने राजपाट त्याग कर अपने पुत्र घटोत्कच को कुल्लू का शासक नियुक्त किया। पांगणा के पश्चिम में पांगणा सरिता अचानक उत्तराभिमुख होकर प्रवाहित होती है। यहीं पांडवों ने शिवलिंग की प्रतिष्ठा कर स्थान को हरिद्वार की तरह पुनीत बनाया। अपने स्वर्गारोहण के दौरान भी पाण्डव पुनः उत्तरवाहिनी सदाशिव के दर्शनार्थ आए और यहाँ स्वर्ग के लिये सोपान निर्मित किये जिन्हें आज भी देखा जा सकता है। पांगणा व आस-पास का क्षेत्र भार्गव परशुराम की रमण स्थली भी रहा है. मातृहत्या के पाप के प्रायश्चित स्वरूप समीपस्थ पंज्यायु गाँव में यजुर्वेदीय ब्राह्मण बस्ती की स्थापना व छण्डियारा देवी के मंदिर की प्रतिष्ठा और इस सतलुज घाटी क्षेत्र में काओ, ममेल, नग्गर नीरथ व निरमण्ड बस्तियों की स्थापना इस बात की पुष्टि करते है।

यहाँ पूजित देव समुदाय में नाग, ऋषि, शिव, विष्णु, शक्ति, महाभारत के पात्र, यक्ष व यक्षिणियाँ आदि हैं। यहाँ वैदिक ऋषि वशिष्ठ, कश्यप, विमल व जमदग्नि देव रूप में पूजित हैं। शैव व. शाक्त मत तो यहाँ आदि अनादि काल से अन्य मतों को अपने में आत्मसात् किये हुए हैं। भार्गव परशुराम यहाँ की धर्म संस्कृति के पुरोधा रूप में पूजित हैं। महाभारत के महान योद्धा राधेय कर्ण, अर्जुन, भीष्म, युधिष्ठिर, भीम, नकुल, सहदेव, द्रौणाचार्य, पुण्डरीक, घटोत्कच, रत्नयक्ष व बकासुर आदि अन्यान्य तत्सम्बंधी पात्र देव रूप में आराधित हैं। धर्म व संस्कृति की इस शाश्वत व्यवस्था से यह निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि वैदिक नदी सतलुज व व्यास के मध्य स्थित सुकेत के धरोहर गाँव पांगणा व सुकेत के सम्पूर्ण क्षेत्र का सांस्कृतिक विकास वैदिक काल से होता आया है। ऋग्वेद में वर्णित सप्तसिंधु क्षेत्र का अंग यह हिमालयी क्षेत्र वैदिक परम्पराओं और मूल्यों का वहन किये हुए है। यहाँ की बोलियों, लोक कथाओं, गाथाओं, देववाणी व सुभाषित साहित्य में वैदिक संस्कृति का परिचय सहज ही मिल जाता है।

पांगणा गाँव के विषय में प्रथम ऐतिहासिक साक्ष्य महाभारत के माध्यम से सुकुट क्षेत्र के विषय में मिलता है। युधिष्ठिर के इन्द्रप्रस्थ में शासन के समय सुकेत इसका अंग रहा। मगध के राजा जरासंध ने सातवीं शतब्दी ई. पू. में सुकुट सहित कई उत्तर भारत के राजाओं को दक्षिण की ओर भागने पर मजबूर कर किया। भगवान बुद्ध का स्वयं हिमालय में शिष्यों सहित भ्रमण का उल्लेख मिलता है। तथागत के कुल्लु (कुल्लूत) आगमन के ऐतिहासिक साक्ष्य मौजूद हैं। सुकेत के कुल्लू का यदा-कदा अंग होने और भौगोलिक समीपता के कारण कुल्लू से यहाँ अवश्य ही बौद्ध धर्म का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। इस बात का प्रमाण यहाँ की धर्म-संस्कृति पर बौद्ध धर्म के प्रभाव के माध्यम से देखा जा सकता है। पांगणा व आसपास के क्षेत्रों में बौद्ध प्रतिमाओं के मिलने से यहाँ बौद्ध प्रभाव को देखा जा सकता है। मौर्य काल में यह क्षेत्र भी मौर्य साम्राज्य का अंग रहा है। इसका प्रमाण अशोक द्वारा कुल्लू में स्तूप की स्थापना है। कुल्लू के पड़ोस में स्थित सुकेत भी मौर्य साम्राज्य का अंग रहा है। पहली व दूसरी शताब्दी में कुषाण वंशज कनिष्क के हिमाचल में मिले सिक्कों के आधार पर यह निष्कर्ष निकालना सहज है कि यह क्षेत्र भी कनिष्क के राजिय का अंग रहा है। कनिष्क काल में

विकसित मथुरा व गांधार शैली की अनेक मूर्तियाँ पांगणा के आसपास मिली हैं। पांगणा में 2020 में मंदिर की खुदाई के दौरान ईरानी प्रभाव की सूर्य मूर्ति के मिलने से यहाँ कुषाण शासन के प्रभाव की पुष्टि होती है। पांगणा के चुराग में भी तथागत की मूर्ति के मिलने से यहाँ कनिष्क द्वारा बौद्ध धर्म के प्रसार के प्रयास के प्रमाण मिलते हैं।

इसके भी प्रमाण मिलते हैं कि गुप्त साम्राज्य अखिल भारतीय स्वरूप लिये हुए था। अत: स्वाभाविक रूप से यह क्षेत्र गुप्तों के अधीन रहा। गुप्तकाल की मूर्तिकला से प्रभावित यहाँ के मूर्ति शिल्प से यह बात सिद्ध होती है। पांगणा में बनी शिव-पार्वती की जटा-मुकुट मूर्ति का कला सौष्ठव गुप्तकाल के भूमरा व दशावतार मंदिरों की मूर्तियों से साम्य रखता है। इसी शैली की मूर्तियाँ पूरे सतलुज घाटी क्षेत्र में पाई जाती हैं। गुप्तकाल के पूर्ववर्ती काल में कनौज के यशोवर्मन व कश्मीर के कर्कोटक वंशीय ललितादित्य का सुकेत पर आठवीं शताब्दी में आधिपत्य रहा। ललितादित्य ने ही पांगणा में कश्मीर में सूर्य पूजा को लोकप्रिय कर पांगणा में सूर्यपूजा को कनिष्क के बाद पुनर्स्थापित किया।

आठवीं शताब्दी में 765 ई. में बंगाल से आए वीरसेन राजपूत ने कालकूट (कोलकाता) की महाकाली के दैवीय आशीष से यहाँ की बर्बर जाति डूंगर व आस-पास के राणाओं और ठाकुरों को पराजित कर पांगणा में दुर्ग बनाकर सुकेत राज्य की राजधानी स्थापित की। अनुगृहीत राजा वीरसेन ने विजयश्री की देवी राजराजेश्वरी महामाया पांगणा को अपने दुर्ग राज प्रसाद में प्रतिष्ठित कर राज्य आरम्भ किया। वीरसेन से लेकर 1948 तक लक्ष्मण सेन तक सुकेत के 52 शासक हुए। 1857 की प्रथम स्वतंत्रता क्रांति ने सुकेत की रजवाड़ाशाही शासन की अलोकप्रिय शासन व्यवस्था से यहाँ की जनता असंतोष से भर उठी। सुकेत में ही हिमाचल में सर्वप्रथम 1862 में रियासती अन्याय के विरुद्ध सत्याग्रह का शंखनाद हुआ। इसके उपरान्त 1876 व 1924 में भी सुकेत में उग्र सत्याग्रह रियासती शासकों की जनविरोधी नीतियों के विरुद्ध हुए। इन सत्याग्रहों ने 1930 के दशक में स्थापित प्रजामण्डल संगठनों को आन्दोलन के लिये मजबूत भूमिका तैयार की। पांगणा प्रजामण्डल के संघर्ष संगठन के माध्यम से सत्याग्रह का मुख्य केन्द्र रहा। यहाँ के युवा अपने अध्ययन के साथ साथ सत्याग्रहियों को गुप्त रूप से सहायता प्रदान करते रहे। चालीस के दशक में सुकेत में सत्याग्रह और उग्र हो गया। सुभाषचन्द्र बोस के हाथ में 1943 में 'आजाद हिंद' फौज का नेतृत्व आने से पांगणा के अनेक स्वतंत्रता सैनानी नेता जी के एक आह्वान पर अपना जीवन उत्सर्ग करने को तैयार हो गये। पांगणा के लोहारू राम, सितलूराम, लटूरिया, थांतीराम और राम दयाल आजाद हिंद फौज के सक्रिय सैनानी बन विदेश में सैनिक प्रशिक्षण प्राप्त करने गये। अगस्त 1945 में सुभाषचन्द्र बोस के रहस्यमयी मृत्यु के बाद आजाद हिंद फौज के ये बहादुर सिपाही जेलों में ठूंस दिये गये या भूमिगत हो गये। पांगणा के समीप गुरूनाल स्थान पर चर्चित अनाम बाबा जो सुभाष चन्द्र बोस के करीबी थे या वे स्वयं थे, 1977 में कुछ महीनों तक रहे। लोहारूराम मुल्तान जेल में कारावास में बन्द रहे। उनकी पत्नी नंदू देवी प्रजामण्डल आन्दोलन में सक्रिय भूमिका निभाती रहीं। नंदू देवी पुरूष के भेष में प्रजामण्डल के सदस्यों के बीच गुप्त सूचनाओं का आदान प्रदान करती रहीं। वे अपने पति लोहारूराम से मिलने पैदल मुल्तान जेल पहुँचीं। पांगणा के ही सितलूराम गुप्ता रंगून, मुल्तान, व लाहौर की जेलों में रहे। सितलूराम जब कालापानी की जेल में रहे तो उन्होंने जेल में नाटक के मुखौटे, ताज, पर्दे व जरी वाली पौशाक बनाने की कला सीखी। सितलूराम के सहयोगी पंज्याणु गाँव के निवासी थांती राम आजाद हिंद फौज के सक्रिय सिपाही रहे और छ: वर्षों तक मुल्तान जेल में रहे। थांतीराम को कालापानी का कारावास भी हुआ। थांतीराम का वास्तविक नाम भवानीदत्त शर्मा था। वे जेल से रिहा होने के बाद भी छद्म नाम से पुकारे जाना पसंद करते थे। रामदयाल और लटूरिया भी आजाद हिंद फौज के सक्रिय सिपाही रहे।

सन् 1946 के बाद प्रजामण्डल की गतिविधियाँ तेज हो गईं। स्वतंत्रता प्राति के बाद प्रजामण्डल के सत्याग्रही रियासती शासन के विरुद्ध अंतिम लड़ाई के लिये लामबंद होने लगे। हिमालयन स्टेट्स सब रीजनल कौंसिल के दिशा निर्देश पर 16 फरवरी को तत्तापानी की सराय में प्रजा मण्डल के सदस्यों की बैठक हुई। बैठक में सुकेत रियासत को प्रथम सत्याग्रह आंदोलन के लिए चुना गया। राजा

को रियासत को 48 घण्टे में भारत संघ में विलय का नोटिस दिया। नोटिस की अवहेलना करने पर हजारों सत्याग्रहियों ने 18 फरवरी 1948 को तत्तापानी और फिरनू की और से आन्दोलन का आरम्भ किया। जैसे-जैसे सत्याग्रही चौकियों पर अधिकार करते गये वैसे-वैसे हजारों लोग अपनी बंदूकों, तलवारों व अन्य आयुधों सहित सत्याग्रहियों के जत्थे में जुड़ते गये। 18 फरवरी की शाम तक सतलुज क्षेत्र की सारी चौकियों पर सत्याग्रहियों का अधिकार हो गया। चौकियों में सत्याग्रहियों को तैनात किया गया। करसोग के भ्रष्ट तहीलदार को घसीट कर कार्यालय से निकाल कर सारे क्षेत्र में तिरस्कृत स्थिति में घुमाया गया।19 फरवरी 1948 को सत्याग्रहियों का विशाल जनसमूह सुकेत की राजधानी पांगणा पहुँचा।19 फरवरी से 22फरवरी तक भारी वर्षा के कारण पाँच हजार सत्याग्रही पांगणा में ही रुके रहे। इन चार दिनों में पांगणा की महिलाओं ने सत्याग्रहियों के खाने की व्यवस्था की। हर ओर विजयोत्सव का वातावरण था। महिला, पुरुष व बच्चे सैकड़ों वर्ष की अलोकप्रिय राजतंत्रीय व्यवस्था से मुक्ति के लिये लालायित थे। 23 फरवरी 1948 को सत्याग्रहियों का पाँच हजार का काफिला बन्दे मातरम् के जयकारे के साथ सुकेत की शीतकालीन राजधानी सुन्दरनगर की ओर बढ़ा। पांगणा के आस-पास के गाँव सरही, माना, परेसी, चरखड़ी व निहरी के लोग अपनी बंदूकों को कारतूसों से भरकर काफिले के अगुआ बने। जहाँ-जहाँ से सत्यग्रहियों का हुजूम गुजरता लोग जुड़ते गये। जय देवी पहुँचकर कर सत्याग्रहियों की संख्या पंद्रह हजार तक जा पहुँची। यहाँ सत्याग्रहियों का स्वागत सुकेत प्रजामण्डल के प्रमुख वीर रत्नसिंह व एक हजार साथियों ने किया। दिल्ली से वल्लभ भाई पटेल ने सत्याग्रहियों को यहीं अगामी आदेश तक रुकने को कहा। परन्तु जोश व शौर्य से भरे सत्याग्रही लोग अब कहाँ धैर्य धारण करने वाले थे। अतः सत्याग्रही भारत माता की जय के नारे के साथ राजधानी सुन्दरनगर की ओर बढ़ने लगे। 25 फरवरी 1948 को सत्याग्रहियों ने राजधानी सुन्दरनगर पर अधिकार कर लिया। इस प्रकार हजारों वर्षों की दासता का अंत हो गया। उस दिन के दी ट्रिब्यून समाचार पत्र में 'दी सेवन डे विच शुक दी हिमालयाज' शीर्षक से सत्याग्रहियों द्वारा हिमाचल की पहली रियासत पर अधिकार की खबर छपी। पांगणा में स्थापित हुए सेन वंश राजपूतों के शासन का अवसान हुआ और 8 मार्च 1948 को सुकेत का भारत संघ में विलय हुआ।

सुकेत की राजधानी पांगणा में आज भी सेन वंश का 1260 वर्ष पुराना छः मंजिला दुर्ग मंदिर राजसी वैभव का प्रतीक है। काठकुणी की दीवारों से निर्मित यह किला पहाड़ी शैली का पश्चिमी हिमालय के प्राचीनतम् दुर्ग मंदिरों में से एक है। मंदिर की शीर्ष मंजिल पर गर्भगृह में महामाया पांगण प्रतिष्ठित है। महामाया पांगणा के इसी दुर्ग मंदिर में सेन वंशज राजाओं का राज्याभिषेक हुआ करता था। यहाँ महामाया का अष्टधातु से बना गौरी-शंकर का अद्भुत सिंहासन था जिसे तत्कालीन राजा लक्ष्मण सेन अपनी नयी राजधानी सुन्दर नगर ले गये। उस समय पांगणा के लोगों ने राजा के इस कदम पर घोर प्रतिक्रिया की थी। महामाया के उस सिहासन में शिव-पार्वती के अतिरिक्त वाहन, गन्धर्व, किन्नर, गण व इकहत्तर सौ बाण विराजमान हैं. मूर्तिकला की ऐसी अलौकिक कृति पूरे उत्तर भारत में दुर्लभ है।

पांगणा व पांगणा के आस-पास अम्बरनाथ, लक्ष्मी-नारायण, देहरी में महिषासुर मर्दिनी, चिण्डी में च्याण्डिका देवी, सरही में गीह नाग, घाड़ी में सदाशिव, पंज्याणु में छण्डियारा (बड़ेश्वरी) देवी, पजैरठी में विमलेश्वर ऋषि, फरास में वशिष्ठ ऋषि देव थला, नगराओं में जड़ देव व शिव देहरा के महासू देव आदि अनेकानेक देवी-देवताओं के मंदिर और उनसे जुड़ी परम्परायें व मान्यतायें हैं जो यहाँ के सांस्कृतिक जीवन को सहस्राब्दियों से संस्कारित किए हुए हैं।

इतिहासकार व साहित्यकार
नारकण्डा शिमला हि.प्र.-171213
सम्पर्क :7018674280

ऐतिहासिक लोक मान्यता – बनाम : भगत-राम दास और माता बालासुन्दरी शक्ति पीठ

–चिर आनन्द

हर शैल शिखर पर शिव शंकर,
हर गाँव में ठाकुर द्वारा है।
हर जनपद में हैं शक्ति पीठ,
हर क्षेत्र गुरूउरद्वारा है।।

उपर्युक्त पक्तियाँ लिखते हुए लेखक का ध्यान देवभूमि पर स्थित अनेकों शक्ति पीठों के साथ-साथ सिरमौर में अपने गांव के निकटवतह्न गांव त्रिलोकपुर मे स्थित माता 'बाला सुन्दरी' के भव्य पीठ की ओर अनायास ही चला जाता है।

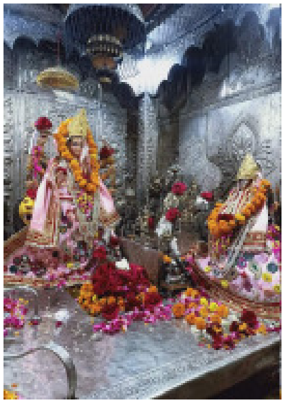

ग्राम त्रिलोकपुर जिला मुख्यालय नाहन से तेईस किलोमीटर की दूरी पर और हिमाचल-हरियाणा प्रदेश की सीमा पर स्थित ग्राम काला आम से छः कि.मी. की दूरी पर स्थित है। इसी गाँव में पिछले लगभग साढ़े चार सौ वर्षो से माता बाला सुन्दरी एक भव्य मन्दिर में विराजमान हैं। यह शक्ति पीठ स्थानीय श्रद्धालुओं का ही नहीं अपितु पड़ोसी राज्यों, 'पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश व उत्तराखण्ड के लोगों की श्रद्धा का भी प्रमुख केन्द्र है।

यद्यपि यह पीठ, माँ ज्वाला जी व नैना देवी प्रभृत्ति इक्यावन शक्ति पीठों की भाँति-भगवती सती के अंगावशेषों से प्रादुर्भूत तो नहीं है, तथापि जहाँ तक साधनाशील व दीन दु:खी भक्तों को मन वांछित फल देने का प्रश्न है, इसके दरबार से आज तक कोई खाली हाथ गया हो, ऐसा कभी नहीं सुना गया।

यों उत्तर भारत में मूल रूप से माता बाला सुन्दरी पौराणिक काल से ही आज के उत्तर प्रदेश के जनपद सहारनपुर के समीपस्थ कस्बे 'देववन' (प्रचलित उच्चारण में प्राय: देवबन्द) में स्थित है। यहाँ पर तो प्राय: बिहार, पश्चिम बंगाल जम्मू व काश्मीर व नेपाल राजस्थान आदि तक के लोग दर्शनार्थ आते हैं।

त्रिलोकपुर में माँ बाला सुन्दरी कब और किन कारणों व परिस्थितियों में प्रकट हुईं, इस विषय में एकाधिक किंवदन्तियाँ अथवा जनश्रुतियों के रूप में इधर घर-घर में सुनी जा सकती हैं। यही नहीं माता बाला सुन्दरी के त्रिलोकपुर में अवस्थित होने की लोक मान्यता ऐतिहासिक तथ्यों से भी पुष्ट होती है सर्व विदित है कि साढ़े चार सौ वर्ष पूर्व आवागमन और व्यापार के लिए बैलगाड़ी और घोड़े-खच्चर ही प्रमुख साधन थे। अत: सिरमौर रियासत के निचले सीमावर्ती क्षेत्र के व्यापारी भी प्राय: बैल गाड़ियों से ही मैदानी क्षेत्रों से व्यापारिक कारोबार किया करते थे।

लोकमान्यता के अनुसार त्रिलोकपुर के निवासी- लाला रामदास नामक एक वणिक का व्यापार कार्य भी देवबन (अब देवबन्द) के व्यापरियों से परम्परागत ढंग से ही चला आ रहा था।

उल्लेखनीय है कि देवबन तत्कालीन क्रय-विक्रय का प्रमुख बाजार था। लाला रामदास स्वभाव से सरल, धर्मभीरू और आध्यात्मिक प्रवृत्ति के व्यक्ति थे। वे नित्यप्रति की पूजा-अर्चना और दान-दक्षिणा देने में गहरा विश्वास रखते थे। इसी लिए गाँव-भोज में वे भगत जी के नाम से जाने जाते थे।

एक बार रियासत में सर्वत्र नमक की कमी होने से रामदास जी देवबन्द से नमक की गाड़ी ही भर कर ले आए। ताकि रजवाड़े के दूरवर्ती क्षेत्रों तक नमक की आपूर्ति की जा सके। उस समय के सिरमौर के लोगों का प्रमुख खाद्य नमक और सत्तू ही था। लस्सी-छाछ तो प्राय: हर घर में होती ही थी। कुकड़ी (मक्की) के सत्तू अमीर-गरीब सभी को नसीब था, केवल नमक ही वह पदार्थ था जो बाहर (दूसरे रजवाड़ों) से आयात किया जाता था और गरीब की रोटी नमक के अभाव में फीकी थी। इसी कारण भगत रामदास घर-घर तक नमक आपूर्ति

करना चाहते थे। उनका ये कार्य दरिद्र नारायण की सेवा का अनूठा उदाहरण भी है।

अस्तु! नमक आया जान कर दूकान पर ग्राहकों की भीड़ लग गई। रामदास जी नमक विक्रय करते रहे, किन्तु शाम तक देखते क्या हैं कि, बोरी खाली होने का नाम ही नहीं ले रही है। इस आश्चर्य के चलते रात को उन्हें ठीक से नींद नहीं आ रही थी और जब नींद आई तो स्वप्न में देखते हैं कि, माता नमक की बोरी से प्रकट होकर कह रही थी....''रामदास! मैं तेरी दयालुता, ईमानदारी और सरल-सच्ची श्रद्धा से प्रसन्न होकर देववन से इसी नमक की बोरी के साथ तेरे घर आई हूँ। तू मेरे बालासुन्दरी स्वरूप को मन्दिर में स्थापित कर। तेरे माध्यम से यहाँ की प्रजा का कल्याण होने वाला है।''

इतना कह कर माता अन्तर्ध्यान हो गई और एक झटके के साथ रामदास की नींद खुल गई। वे इस-चमत्कार से हक्के-बक्के रह गये, साथ ही मन्दिर बनाने की अपनी असमर्थता से चिन्ता में पड़ गए। लेकिन तुरन्त ही अपनी चिन्ता का समाधान भी उन्हें सूझ गया। उन्हें याद हो आया कि 'हमारे राजा- महाराज प्रदीप प्रकाश जी- जैसे जन हितैषी और धार्मिक राजा के रहते चिन्ता करना गलत है। मैं उन्हीं से अपनी चिन्ता का समाधान करवा लूंगा।

ऐसा विचार आते ही लाला रामदास प्रसन्नचित्त-प्रातः ही राजदरबार में अपनी अर्जी लगाने रियासत की राजधानी नाहन चल पड़े। परिणाम आशा के सर्वथा अनुकूल रहा। इस प्रकार महाराज प्रदीप प्रकाश ने सहर्ष मंदिर निर्माण के आदेश देकर अपने धर्मनिष्ठ और प्रजा पालक शासक का परिचय दिया। इस प्रकार सन् 1573 ई.-तदनुसार विक्रमी संवत 1630 में त्रिलोकपुर में माता बाला सुन्दरी का आकर्षक मन्दिर स्थापित कर मूर्ति प्रतिष्ठित की गई। भगत रामदास को पूजा-अर्चना और मंन्दिर की देखरेख का दायित्व दिया गया।

एक अन्य लोक मान्यतानुसार लाला- राम दास अपने घर व दूकान के समीप जिस पीपल की पूजा-अर्चना करते थे, वही पीपल एक बार भयंकर तूफान-आंधी में समूल उखड़ कर गिर गया, किन्तु उनके मकान दूकान ही नहीं अपितु आस-पड़ोस में भी किसी प्रकार की जन-धन को आंच तक नहीं आई। उसी पीपल की जड़ से माता बाला सुन्दरी पिंडी रूप में प्रकट हुई।

धार्मिक प्रवृत्ति के लाला जी उस पिण्डी को घर ले आए और उसी की पूजा पीपल के बदले में करने लगे। ठीक उल्लिखित घटना के अनुसार पिण्डी ने स्वप्न में स्वयं के 'बाला सुन्दरी' होने और मन्दिर स्थापना करने का आग्रह किया तथा महाराज प्रदीप प्रकाश ने सन् 1630 में मन्दिर निर्मित कर रामदास भगत की कामना पूरी की।

महाराज प्रदीप प्रकाश के पश्चात् सन् 1823 ई. में महाराज फतेह प्रकाश और सन् 1881 ई. में महाराज रघुवीर प्रकाश ने इस मन्दिर का जीर्णोद्धार करवा कर मन्दिर को भव्य और नव्य स्वरूप दिया। किन्तु गर्भगृह में स्थापित मूर्ति स्थान यथावत बना रहा।

अब स्वतंत्रता के पश्चात तो मन्दिर न्यास के गठन से मन्दिर की भव्यता दर्शनीय व नमनीय हो गई है। हज़ारों लोगों की जीविका प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप से मन्दिर पर निर्भर करती है। यहाँ अनेक बहुमंजिला धर्मशालाओं में आगन्तुक श्रद्धालुओं के रहने-ठहरने व खाने की उत्तम व्यवस्था उपलब्ध है। समीपस्थ सरोवर में भगवान शिव का भव्य मन्दिर भी दर्शनीय है। संस्कृति के साथ शिक्षा के लिए वरिष्ट उच्च विद्यालय हैं। पशु चिकित्सा व मानव स्वास्थ्य रक्षा के लिए चिकित्सा केन्द्र स्थापित हैं। हि.प्र. भाषा, कला व संस्कृति विभाग की और से ज्ञानवर्धक संग्रहालय स्थापित किया गया है। मन्दिर न्यास के कर्मियों के लिए पर्याप्त आवास और भण्डारा वितरण के लिए पर्याप्त स्थान व सुविधाएँ बारहों मास उपलब्ध रहती हैं। मन्दिर में एकत्रित चढ़ावे का जनकल्याण के लिए उपयोग किया जाता है। इस सन्दर्भ में

लेखक अपनी चार पंक्तियाँ रखने का लोभ संवरण नहीं कर पा रहा है- यथा-

हिम श्रृंगों से करुणा बन ज्यों-
नदियाँ पर उपकार करें।
हम भी शुभ कर्मों से सबके -
जीवन का उद्धार करें।।
ये देवभूमि है, महादेव का
वास है तन में मन में भी
देवत्व उभरते देखोगे
जड़ में भी चेतन में भी।।

लेखक एवं प्रेषक
ग्रा. सैनवाला -नाहन,
सिरमौर 173030।
सम्पर्क 8219296348/
9418498785

देवता : जिनके बगैर हर कार्य अधूरा है --पवन चौहान

हिमाचल को देवी-देवताओं की धरती कहा जाता है। यह बात यहाँ स्थित मंदिरों से स्वत: ही परिलक्षित हो जाती है। इन्हीं देवताओं में से ग्राम देवता, थान व कुल देवता ऐसे देव हैं जिनकी लोग आज भी उसी श्रद्धा और विश्वास से पूजा अर्चना करते हैं जितना हमारे पुरखे रहे हैं। ग्राम देवता किसी समाज में वर्गीकृत विभिन्न टोलियों का अपना-अपना ग्राम देवता होता है। या यूं कहा जाए तो गलत न होगा कि किसी बड़े संयुक्त परिवार का अपना ग्राम देवता होता है। इसका पूजन उसी टोली विशेष के लोगों द्वारा किया जाता है। ग्राम देवता किसी देव का ही रूप होता है। महादेव निवासी चेतराम जी के अनुसार, 'उनका ग्राम देवता देव बाला कामेश्वर का रूप है।' ग्राम देवता को यदि 'टोली देवता' भी कहा जाए तो गलत न होगा क्योंकि यह सिर्फ किसी एक टोली विशेष का ही देवता होता है। टोली के लोग चाहे कहीं भी क्यों न बस जाएँ, वे अपने इन्हीं देव की भक्ति करते हैं। ग्राम देवता पर परिवार की रक्षा की जिम्मेदारी होती है। सुविधानुसार, ग्राम देवता को परिवार के किसी एक सदस्य के घर पर रखा जाता है। इस देवता को बांस के करंडू (टोकरी) में भी स्थापित किया जाता है या फिर अपने सामर्थ्यनुसार इसका छोटा या बड़ा मंदिर बनाया गया होता है। इस देवता की अपनी एक छड़ी होती है जो 'क्ड़ोल्हों' (लोहे के रिंग) से सुसज्जित रहती है। इसका परिवार के लोग साजे (संक्रान्ति) के दिन विधिवत् पूजन भी करते हैं तथा परिवार के हर घर में ले जाकर उसके दर्शन सदस्यों को करवाते हैं। घर आए देवता को परिवार वाले अपनी सामर्थ्यनुसार या साजे (संक्रान्ति पर्व)के अनुरुप भेंट भी चढ़ाते हैं। जैसे लोहड़ी की बात करें तो इस दिन परिवार वाले चावल, माह (उरद), नमक, हल्दी, देशी घी आदि देवता को चढ़ाते हैं। इस कार्य को परिवार के ही सदस्य देवता को घर-घर ले जाकर पूर्ण करते हैं।

थान : थान अर्थात स्थान देवता। जिसे भूमि देवता या अन्न देवता भी कहा जाता है। जिस जगह पर कोई परिवार रहता है, वह उस जगह पर नजदीक कहीं थान का निर्माण करते हैं। यह किसी टोली विषेश का देव होता है। जब परिवार या टोली बड़ी हो जाए और परिवार के लोग स्वंय को दूर-दूर व्यवस्थित कर लें तो वे अपनी सुविधानुसार पूरे पूजा विधान द्वारा थान को अपने नजदीकी क्षेत्र में ले जाते हैं। यूं कहा जाए तो गलत न होगा कि एक टोली के एक से ज्यादा थान हो सकते हैं। इस प्रक्रिया के विषय में बुजुर्गों का कहना है कि दो छोटे-छोटे पत्थर जिनमें धारियाँ हों और जिनका भार समान हो, को लिया जाता है। विशेष पूजा अर्चना के पश्चात उन्हें किसी खास स्थान (कुल पुरोहित द्वारा निर्धारित) पर दबा दिया जाता है। कई लोग इन्हे पेडू (अनाज के दाने रखने का बांस से बना बड़ा कंटेनर) के अंदर भी रखकर इस प्रक्रिया को पूर्ण करते हैं। कुछ दिन भूमि के अंदर रहने के पश्चात विशेष दिन उन्हें बाहर निकाला

जाता है। कहते हैं, इस प्रक्रिया में एक पत्थर का भार स्वंय ही बढ़ जाता है। जिस पत्थर का भार बढ़ा होता है, उस पत्थर में देवता का वास हो गया माना जाता है। इस पत्थर को पूजा अर्चना के पश्चात उसे थान के रूप में स्थापित किया जाता है।

थान को कई जगहों पर 'ग्राम देवता' से भी संबोधित किया जाता है। न फसल को पहले थान को ही चढ़ाया जाता है। उसके बाद ही परिवार द्वारा अन्न का सेवन किया जाता है। देवता को खुश करने हेतु ज्यादातर परिवार बकरे की बलि भी देते हैं, जो सही नहीं है। जब दुल्हा, दुल्हन को ब्याह कर घर लाता है तो वह सबसे पहले थान का आशीर्वाद लेते हैं तथा अपनी और परिवार में सम्मिलित नई सदस्या (दुल्हन) की रक्षा की देवता से अरदास करते हैं। अमूमन, थान के मंदिर में महिलाओं का प्रवेश वर्जित होता है। थान को 'नारसिंह' का रूप माना जाता है। इसलिए महिलाओं के लिए यह व्यवस्था रहती है।

थान आमतौर पर छोटे आकार के बंद या खुले होते हैं। थान में देवता की पत्थर की मूर्ति, त्रिशूल, चिमटा, देवता की छड़ी जो 'कड़ोल्हों' (लोहे के रिंग) से सुसज्जित रहती है आदि आमतौर पर देखे जा सकते हैं। यूँ तो हर माह में आने वाले 'साजे' (संक्रान्ति) को थान की पूजा का प्रचलन है लेकिन बदलते समय के साथ इस पूजा में भी बदलाव आ गया है। यह पूजा अब साल में नई फसल, जन्मदिन या फिर विवाह आदि के मौकों तक ही सीमित रह चुकी है। इस पूजा के लिए कुल पुरोहित को निमंत्रित किया जाता है। थान की महता और अपने श्रद्धा भाव को कायम रखते हुए कुछ परिवार वर्ष में एक बार थान के प्रति मेले व भोज आदि का आयोजन भी करते हैं।

कुल देवता : कुल देवता या देवी को 'इष्ट' की संज्ञा से भी नवाजा जाता है। कुल देवता या कुल देवी किसी विशेष वर्ग, टोली, परिवार या इलाके के न होकर पूरे समाज में किसी भी वर्ग के हो सकते हैं। ये सदियों से उस परिवार या समाज की आस्था के प्रतीक होते हैं। चाहे परिवार या कोई समाज इन पीढ़ियों के दौरान यहाँ से वहाँ कहीं दूर ही क्यों न चले गए हों। उस परिवार या समाज के लोगों को विशेष धार्मिक अनुष्ठानों जैसे मुंडन संस्कार, विवाह आदि के न्योते को पूर्ण करने के लिए कुल देवता या देवी के मंदिर जाना ही होता है। जहाँ सदियों पहले से उनके बुजुर्ग रहा करते थे तथा जिन्होंने कभी उस इलाके के देवी या देवता को अपना इष्ट माना था। उदाहरण के तौर पर सुन्दरनगर (हिमाचल प्रदेश) में बसे चंदन शर्मा के पूर्वज कलकत्ता से थे। लगभग एक सदी पहले उनके बुजुर्ग सुन्दरनगर बस गए थे लेकिन उन्हें आज भी अपने परिवार के कुछ विषेश धार्मिक अनुष्ठानों को पूर्ण करने हेतु कलकत्ता जाना पड़ता है। उनका मानना रहा है कि यदि वे इन नियमों का पालन न करे तो उन्हें कई खोट निकल आते हैं।

रोहड़ू (शिमला) के कुछ इलाकों में तो ग्राम देवता की बड़ी मान्यता है। इस मान्यता के चलते वहाँ ग्राम देवता का छूरा ही दुल्हन को ब्याह कर लाता है। कुल देवता या देवी के मंदिर बड़े और भव्य होते हैं।

इनमें पूरे वर्ष भर श्रद्धालुओं का तांता लगा रहता है। इन देवताओं के प्रति हर वर्ष मेलों का आयोजन किया जाता है जिसमें संबधित इलाके के अलावा दूर-दूर से हजारों की संख्या में श्रद्धालु आकर अपना शीश नवाते हैं। लोगों द्वारा इन देवताओं के लिए जागरण व भंडारे का आयोजन भी किया जाता है। इनमें भक्तों द्वारा भक्तिरस में डूबे गीत गाए जाते हैं। देवताओं को समर्पित ये गीत व्यक्ति के हृदय में सहसा ही भक्ति का संचार करते हैं। इन देवों की पूजा-अर्चना से जहाँ हमें देवता का आशीर्वाद प्राप्त होता है वहीं हमारे अंतस में एक असीम आत्मविश्वास जागृत होता है जो हमें जिंदगी के मुश्किल पलों को हँसकर गुजारने में हमारी मदद करता है। यह प्रक्रिया हमारे भीतर सामाजिक सरोकारों को भी जन्म देती है जो हमें एक-दूसरे के साथ जोड़े रखता है।

गाँव व डा. महादेव,
तहसील सुन्दरनगर, जिला मण्डी
(हि.प्र.)- 175018
मो.- 9418582242, 9805402242
chauhanpawan78@gmail-com

लिप्पा गोम्पाः इतिहास, लामाओं की वंशावली और खुनु लोतो

–नेम चन्द ठाकुर

लिप्पा, जिसे राजस्व रिकॉर्ड में लिप्पा खास के नाम से जाना जाता है, हिमाचल प्रदेश के किन्नौर जिले का एक सुंदर और आकर्षक गाँव है। यह बर्फ के पहाड़ों से निकलने वाली दो बारहमासी खड्डों, 'तैती खड्ड या असरंग खड्ड तथा लिप्पा खड्ड' के संगम पर स्थित है। यह संगम आगे जाकर कीरंग खड्ड का निर्माण करता है। कीरंग खड्ड करीब 10 किलोमीटर दूर जाकर नीचे सतलुज में मिलकर इस नदी की जलधारा को बढ़ाती है। कीरंग खड्ड को पाज़र खड्ड भी कहा जाता है। रामपुर से 137 किलोमीटर दूर स्थित यह गाँव तिब्बती सीमा के करीब किन्नौर जिले के ऊपरी हिस्से में प्रसिद्ध हिंदुस्तान-तिब्बत सड़क पर किसी समय एक महत्वपूर्ण पड़ाव था। समद्रतल से 2438 मीटर की ऊंचाई पर ऊबड़-खाबड़ पहाड़ी ढलान पर 267 हेक्टेयर क्षेत्र में फैले इस बड़े गाँव में 280 परिवार आबाद हैं। यह गाँव अपने अतीत के आकर्षण और पौराणिक इतिहास को समेटे हुए है जो लम्बे समय से सभी आगंतुकों, विशेष रूप से साहसिक पर्यटकों और शोधार्थियों को अपनी ओर आकर्षित करता रहा है। इस प्रकार बाहरी दुनिया के सम्पर्क में आने के बाद, आधुनिकीकरण ने इसकी अतीत की भव्यता और प्राकृतिक सौंदर्य को भारी नुकसान पहुँचाया है। नतीजतन, अब कंक्रीट से बनी आधुनिक इमारतों के बीच कुछ ही पारम्परिक घर देखने को मिलते हैं। आधुनिकीकरण का दैत्य अतीत के बचे हुए इन निशानों को कब मिटा दे कहा नहीं जा सकता।

स्वतन्त्रता-पूर्व गाँव में केवल साठ घर थे, जो अब 280 घरों में विकसित हो गए हैं। 'मैनें' गाँव में सबसे पुराना खानदान है। 'मैनें' के अलावा गाँव में अन्य खानदान भी हैं जैसे लामा परिवार, बोरिस परिवार (जो मंडी से यहाँ आकर बसे), कोचे परिवार (जो रोहड़ू से आए थे) आदि-आदि। डॉ. सुशील सागर गाँव के प्रमुख व्यक्ति रहे हैं, जो नौणी (सोलन) स्थित डॉ. यशवंत सिंह परमार औद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय के कुलपति रहे।

लिप्पा को पहले स्थानीय लोगों द्वारा 'लिथंग' और भोटी-भाषी लोगों द्वारा 'लीद' कहा जाता था। डॉ. हरि चौहान की अध्यक्षता में हिमाचल प्रदेश राज्य संग्रहालय की टीम ने इस हिमालयी क्षेत्र में प्राचीन संस्कृति के विकास का अध्ययन करने के लिए इस गाँव के साथ-साथ कानम गाँव में भी कब्रगाह स्थलों का पता लगाया। उस अन्वेषण के दौरान, लिप्पा गाँव में कुछ महापाषाणकालीन कब्रों की खुदाई की गई थी।

गाँव में एक सुंदर मठ है, जिसे गल-डगिं चोखोर कहा जाता है। यह मठ गाँव के ऊपरी हिस्से में स्थित है। दो अन्य पुराने मठ भी हैं। गाँव के दाहिने हिस्से में ल्हा-खंग गोम्पा और गाँव के निचले हिस्से में बाईं ओर कंग्यूर ल्हा-खंग गोम्पा स्थित है। ऐसा कहा जाता है कि ल्हा-खंग गोम्पा का निर्माण महान रिनचेन जंगपो ने किया था, जिसे बाद में लगभग तीन सौ पचास वर्ष पहले एक शेल्टू (गाँव के एक अमीर व्यक्ति) द्वारा विस्तृत स्वरूप प्रदान किया गया था। ल्हा-खंग गोम्पा का वर्तमान में जीर्णोद्धार किया जा रहा है। लामा कलज़ंग नीमा (66 वर्ष) इन सभी गोम्पाओं के प्रमुख लामा हैं। लामा कलजंग नीमा के अनुसार, वर्तमान में मठ में तीस लामा और ज़ोमो निवास कर रहे हैं।

करीब 100 साल पुराना नवनिर्मित बौद्ध मठ गाँव का मुख्य आकर्षण है। लामा देव राम, जो एक सम्मानित ज्योतिषी थे, ने इस मठ की स्थापना की थी, लेकिन इसे

उनके पुत्र सोनम दुबग्ये ने 1920 के दशक में पूरा किया था। इन बौद्ध मठों के अलावा, यहाँ एक हिंदू मन्दिर भी है जो 'तंग्ता नरैणस' को समर्पित है, जिसे देवता तंग्ता-शू कहा जाता है। एक अभयारण्य भी इस देवता के प्रति समर्पित है। ज़मसेरिंग के इस अभयारण्य में, हर साल कार्तिक महीने के 3 से 5 प्रविष्ठे (तारीख) को गाँव का एक मेला 'फुलैच' मनाया जाता है। 1960 तक, 'तंग्ता-शू' के मन्दिर में पशु बलि का प्रचलन था। कालान्तर में बौद्ध लामा की सलाह पर पशु बलि को बन्द कर दिया गया और स्थानीय देवता को बौद्ध धर्म में समाहित कर लिया गया। पशु बलि के स्थान पर अब प्रसाद, रोट और राख अर्पित की जाती है। समीप ही नाग देवता को समर्पित एक अन्य मन्दिर भी देवता 'तंग्ता-शू' परिसर के दाहिनी ओर स्थित है।

बौद्ध गोम्पा के लामाओं की वंशावली:-

शेरप थरचिन:-शेरप थरचिन लामा देवा राम के पिता थे। जैसा कि लेखक ने पता लगाया है, वह पहले लामा थे। शेरप थरचिन से पहले किसी भी लामा के बारे में कोई जानकारी उपलब्ध नहीं है। वे ज्योतिष के बड़े विद्वान थे, जिन्होंने कई बार तिब्बत की यात्रा की। उन्होंने खुनु लोतो (भोटी पंचांग) शुरू किया। शुरू में यह पंचांग केवल पांडुलिपि के रूप में प्रकाशित किया जाता था। इसकी प्रतियाँ बनाने के लिए उन्होंने एक कॉपी-राइटर का प्रबन्ध किया था। शुरूआती दिनों में खुन्नु लोतो की प्रतियाँ किन्नौर जिले के केवल कुछ गाँवों में ही बाँटी जाती थीं।

लामा देव राम (1858-1921):-शेरप थरचिन के दो बेटे थे। जंगछुप ग्यलथन और छेरिंग दोर्जे। छेरिंग दोर्जे को 'गुम-टोवंग-ता'[1] के नाम से भी जाना जाता था। लामा देव राम का असली नाम जंगछुप ग्यलथन था। देवा राम उन्हें दिल्ली और काशी के उनके गुरूओं द्वारा दिया गया था। वह किन्नौर के साथ-साथ तिब्बत में भी ज्योतिष के क्षेत्र में प्रसिद्ध व्यक्ति थे। उन्होंने वैरागी जीवन व्यतीत किया और अपनी पैतृक सम्पत्ति पर कोई दावा नहीं किया। उनका जिक्र राहुल सांकृत्यायन ने अपनी पुस्तक 'किन्नर देश' में भी किया है। उनके बेटे सोनम दुबग्ये के जन्म के बाद उनकी पत्नी का देहांत हो गया था। इस सदमें के बाद वे भिक्षु बन कर तिब्बत चले गये और वहाँ कई वर्षों तक रहे। उन्होंने विभिन्न विषयों पर कई पुस्तकों का अध्ययन किया और ज्योतिष में गहरी रुचि ली। बाद में वे घर लौट आये लेकिन दोबारा शादी नहीं की। भारत वापस आने के बाद, उन्होंने अपने माता-पिता के पेशे के प्रति रुचि लेना शुरू कर दिया और खुनु लोतो पंचांग तैयार करना शुरू किया, जिसे उनके पिता शेरप थरचिन तैयार करते थे। उन्होंने खुनु लोतो में तिब्बती दृष्टि प्रदान की और लिथो प्रेस पर काशी के पंचांगों की तर्ज पर दिल्ली से उसे छपवाना शुरू किया। दिल्ली में छपाई की लागत ल्हासा की तुलना में आधे से भी कम थी। वह पंचांग को पुस्तकाकार प्रदान करने के बाद अपने स्वयंसेवकों के माध्यम से सिलीगुड़ी और कलिंगपोंग के रास्ते ल्हासा, ताशा लंप, यंग्त्जे आदि स्थानों पर प्रतियाँ भेजते थे। 1948 में खुनु लोतो की 4000 प्रतियाँ छापी गईं थी।

लामा देवा राम ने उस व्यवसाय से अच्छी आय अर्जित की, लेकिन पैसा रखना उनका उद्देश्य नहीं था। वह भारतीय बौद्धों के साथ-साथ तिब्बत में भी एक प्रसिद्ध व्यक्ति थे। उन्होंने बड़ी रुचि और भक्ति के साथ लिप्पा गाँव के ऊपरी हिस्से में निञ्मा-पा संप्रदाय के एक नए गोम्पा का निर्माण शुरू किया। इस गोम्पा में दो मन्दिर एक साथ जुड़े हुए हैं, एक बुद्ध को समर्पित है और दूसरा मैत्रेय और भविष्य के बुद्ध के प्रति। मैत्रेय के मन्दिर में तंग्यूर और कंग्यूर के बड़े खण्डों को संग्रहित करने के लिए सुन्दर अलमारियाँ बनाई गई हैं। कंग्यूर की 103 पोथियाँ और तंग्यूर की 235 पोथियाँ ल्हासा से लाई गईं। ये किताबें ट्रेन से शिमला तक पहुँचीं और उसके बाद बण्डलों में घोड़ों पर लादकर ले जाई गईं। मैत्रेय मन्दिर में तंग्यूर और कंग्यूर के खण्डों को रखने के लिए सुंदर मूर्तियाँ और उत्कृष्ट अलमारियों का निर्माण किया गया है। दीवारों पर चित्रकारी की पारम्परिक शैली को बरकरार रखने

का विशेष ध्यान रखा गया है। वे स्वयं सारनाथ गए और मूलगंध कुटी में जापानी चित्रकारों द्वारा किए गए भित्ति चित्रों का अध्ययन किया और उनके चित्र प्राप्त किए। तदोपरान्त लद्दाख के एक विशेषज्ञ चित्रकार को नियुक्त कर वैसे ही चित्रों का गोम्पा की दीवारों में चित्रांकन किया गया। गोम्पा को 1913 में पूजा-अर्चना के लिए व्यवहार में लाया गया। हालाँकि, मन्दिर का बचा हुआ अधिकांश काम उनके बेटे ने पूरा किया। गोम्पा के लगभग पूरा होने पर, देवा राम अपने बेटे सोनम दुबग्ये और कुछ अन्य लोगों के साथ महान बुद्ध और मिलारेपा (मी-ला-रस-पा, यानी सूती कपड़े पहने योगी,1038-1123) की मूर्तियों को लाने के लिए तिब्बत गए। तिब्बत यात्रा में उनके साथ एक रोपा के खांडू खानदान से, एक बाबूजी स्पिलो से और एक व्यक्ति पास के गाँव से भी गये। 1921 ई0 में जब वे तिब्बत से मूर्तियाँ लेकर लिप्पा (किन्नौर) लौट रहे थे, रास्ते में उनके तीन साथियों की मृत्यु हो गई। परवाणू के निकट खलदारी गाँव में लामा देवा राम भी बीमार हो गये और लू लगने से वहीं उनकी मृत्यु हो गई। जब वे अपनी अंतिम साँस ले रहे थे, उन्होंने अपने पुत्र सोनम दुबग्ये को लिप्पा गोम्पा में भगवान बुद्ध की मूर्ति और रोपा गोम्पा में मिलारेपा की मूर्ति स्थापित करने का निर्देश दिया। तद्नुसार, लामा देवा राम की सलाह पर, सोनम दुबग्ये ने लिप्पा और रोपा गाँवों में प्रतिमाएँ स्थापित कीं।

छेरिंग दोर्जे (गम-ट्वोंग-टा):-'गुम-टोवंग-ता' लामा देव राम के छोटे भाई थे। अपनी युवावस्था के दौरान वे तिब्बत गए और वहाँ कई वर्षों तक रहे। उन्होंने तिब्बत में तंत्र का अध्ययन किया। जब गुम-टोवंग-ता ने अपने गुरु से विदा लेकर किन्नौर आने का निर्णय लिया तो वह अपने गुरु का एक जूता अपने साथ ले आये, जिसे उन्होंने अपने पूरे जीवन में हमेशा अपने सिर पर टोपी के नीचे रखा। गुम-टोवंग-ता कभी प्रमुख लामा नहीं बन सके। हालाँकि, लामा देव राम की अनुपस्थिति में, उन्होंने प्रमुख लामा द्वारा किए जाने वाले सभी अनुष्ठानों और रीति-रिवाजों का निर्वहन किया। उनके दो बेटे थे जिनका नाम देवधन और छेवांग निम्येल था।

छेवांग निम्येल अपने बचपन में घर से बाहर भाग गया। धार्मिक अध्ययन के लिए तिब्बत चला गया और वहाँ लम्बे समय तक रहा। उसने बौद्ध धर्म और आयुर्वेद की शिक्षा प्राप्त की। जब लामा देव राम बुद्ध और मिलारेपा की मूर्तियों के लिए तिब्बत गए, तो उन्होंने ल्हासा में छेवांग निम्येल को पाया और उन्हें वापस किन्नौर ले आए। वह लम्बे समय तक गेलोंग (ब्रह्मचारी) रहे। उन्होंने इधर-उधर भ्रमण किया और भगवान बुद्ध की शिक्षाओं का प्रसार करते रहे। उन्होंने लाबरंग गाँव में एक स्कूल की स्थापना की और इस क्षेत्र में बड़ी संख्या में लोगों को बौद्ध धर्म की शिक्षा दी। वह क्षेत्र में एक प्रसिद्ध आमची भी बन गए और किन्नौर और स्पीति क्षेत्र के रोगियों की देखभाल में हमेशा व्यस्त रहते थे। उन्होंने लाबरंग गाँव की लड़की से शादी की जिससे उनकी एक बेटी थी। फिलहाल वह 74 साल की हैं और लिप्पा में एक जोमो की जिंदगी जी रही हैं। वर्तमान में गोम्पा के प्रमुख लामा कलजंग नीमा के पुत्र शेछा कुंथेन जब 3 साल के थे, उन्हें छेवांग निम्येल का अवतार घोषित किया गया था। अब उनकी उम्र 38 साल है।

'गुम-टोवंग-ता' के दूसरे बेटे देवधन के तीन पुत्र थे, जिनके नाम संग्ये छूपेन (1926-1990), लामा लालचंद नेगी और नवांग थे। संग्ये छूपेन एक प्रसिद्ध आमची (आयुर्वेदिक चिकित्सक) थे। उन्होंने आयुर्वेद में अपनी शिक्षा वैद्य सुंदर सिंह से ली, जिनका मनाली (कुल्लू) में एक संस्थान भी था। उस संस्थान को सरकार द्वारा आमची की उपाधि प्रदान करने के लिए मान्यता नहीं थी। संस्था के प्रमुख की सलाह पर संग्ये छूपेन आयुर्वेद की शिक्षा प्राप्त करने के लिए तिब्बत गए और आमची की उपाधि प्राप्त की। वह किन्नौर के साथ-साथ लाहुल और स्पीति में प्रसिद्ध आमची बन गये। उनका भोटी पर अच्छा अधिकार था और तिब्बत के बारे में भी उन्हें अच्छा ज्ञान था। इस योग्यता के कारण सरकार की सीआईडी विंग ने उन्हें अपने

पास नियुक्त कर लिया, जहाँ उन्होंने कई वर्षों तक सेवा की। अपने जीवन के अंतिम दिनों में वह शराबी हो गया जिस कारण उसकी मृत्यु हो गई। देवधन का तीसरा पुत्र नवांग था, जो गाँव में रहता था और कम उम्र में ही काल का ग्रास बन गया था।

सोनम दुबग्ये (1882-1971):-लामा देवा राम की मृत्यु के बाद, सोनम दुबग्ये लिप्पा गोम्पा के लामा बन गए। उन्होंने पहले की स्थापित परम्पराओं का निर्वहन करते हुए खुनु लोतो का प्रकाशन भी जारी रखा। उन्होंने अंततः गोम्पा को पूर्ण रूप प्रदान किया और अपने पिता की सलाह पर उसमें भगवान बुद्ध की मूर्ति स्थापित की। राहुल सांकृत्यायन 15 जून 1948 को लिप्पा आए और 17 जून 1948 तक वहीं रहे। उन्होंने सोनम दुबग्ये के बारे में भी अच्छा विवरण दिया है। वे बहुत मेहनती थे।

सोनम दुबग्ये की दो पत्नियाँ थीं। दूसरी पत्नी से उनके दो बेटे थे, जिनका नाम मिथम याछो (विद्यासागर नेगी 1930-2017) और तंजीन छेजंग (1935-2001) थे। तंजिन छेजंग को तंजीन प्रेमी के नाम से भी जाना जाता था। मिथम यच्छो लामा नहीं बने, लेकिन उन्होंने शिक्षक बनने का विकल्प चुना। उन्हें आसपास के इलाकों में गुरुजी के नाम से जाना जाता था। लामा सोनम दुबग्ये का निधन 1971 में हुआ।

लामा लालचंद नेगी (1923-2003):-लामा सोनम दुबग्ये की मृत्यु के बाद, लाल चंद नेगी 1971 में लिप्पा गोम्पा के प्रमुख लामा बने। क्योंकि सोनम दुबग्ये के दोनों पुत्र लामा बनने की जरूरी योग्यताओं को पूरा नहीं करते थे। उन्होंने गुम-टोवंग-ता और लामा सोनम दुबग्ये से लामावादी शिक्षा प्राप्त की।

लामा नामग्याल शेरप (1942-2010):-लामा लालचंद नेगी की मृत्यु के बाद, नामग्याल शेरप 2003 में लिप्पा गोम्पा के प्रमुख लामा बन गए। वह प्रमुख लामा के रूप में केवल कुछ वर्ष रहे। 2010 में 68 साल की उम्र में उनका निधन हो गया। उनके दादा भी लामा थे, जो गुम-टोवंग-ता के बेटे थे।

लामा कलजंग नीमा (1955-):-लामा नामग्याल शेरप की मृत्यु के बाद, लामा लाल चंद नेगी के पुत्र कलजंग नीमा 2010 में लिप्पा गोम्पा के लामा बने और वर्तमान में उस प्रतिष्ठित पद को सुशोभित कर रहे हैं। उन्होंने गाँव के स्कूल से पाँचवीं तक की पढ़ाई की और छठवीं कक्षा में चांगो में दाखिला लिया। वे अभी सातवीं कक्षा में ही थे जब यह निर्णय लिया गया कि उन्हें एक लामा की शिक्षा प्राप्त करनी है और अन्य किसी शैक्षणिक योग्यता की कोई आवश्यकता नहीं थी। अपने पिता के साथ, उन्होंने चांगो, काजा, करछम, रिकांग-पियो, कल्पा आदि विभिन्न स्थानों का दौरा किया। उन्होंने अपनी धार्मिक शिक्षा गाँव के गोम्पा से ही प्राप्त की।

डक्-चौंपा:- एक अन्य धार्मिक स्थल है जो लिप्पा से असरंग गाँव की ओर लगभग चार किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। ऐसा कहा जाता है कि महान पद्मसंभव ने इस स्थान पर नब्बे डिग्री के कोण पर खड़ी एक चट्टान पर तप किया था। अब चट्टान के सामने ग्रामीणों द्वारा एक लघु मन्दिर बना दिया गया है और यहाँ हर साल मेला भी लगता है। एक किम्वदंती के अनुसार लगभग तीन सौ साल पहले एक बार बोरिस खानदान की एक बूढ़ी महिला ने घाटी के घने जंगल में अपने मवेशियों को चराते हुए एक फरिश्ते को अपने सिर के ऊपर से उड़ते हुए देखा जो डक्-चोंपा में एक चट्टान पर बैठ गया। इस फरिश्ते ने एक लामा के वस्त्र धारण किए हुए थे। उस महिला ने शाम को गाँव में आकर ग्रामीणों को पूरी घटना सुनाई और ग्रामीणों से उस स्थान पर जाने का आग्रह किया जहाँ वह देवदूत बैठा था। डक्-चोंपा गाँव से काफी दूर था अतः लोगों ने वहाँ तक जाने में उदासीनता दिखाई। उस महिला ने उनसे यह भी वादा किया कि वह उस पवित्र स्थान पर आने वाले सभी लोगों को एक धाम भी देगी। उसके बाद गाँव के मुखिया, लामा के साथ ग्रामीणों ने अगली सुबह उस जगह का दौरा किया और वहाँ एक लामा की छवि देखी। बुढ़िया की बात और उसके द्वारा बताए गए लक्षणों के अनुसार प्रमुख लामा ने बताया कि उक्त देवदूत महान पद्मसंभव थे।

जिस दिन बुढ़िया ने देवदूत को देखा उस दिन आषाढ़ मास के 22 प्रविष्ठे थे। अगले दिन 23 प्रविष्ठे को पूरे गाँव ने उस जगह का दौरा किया। वचन के अनुसार बुढ़िया ने 23 तारीख को डक्-चौंपा में सभी ग्रामीणों को धाम दी। इस प्रकार डक्-चौंपा में हर आषाढ़ के 23 प्रविष्ठे को मेला लगने लगा। कालान्तर में लामा देवा राम की सलाह पर यह तिथि बदल दी गई और ग्रामीणों ने इस मेले को प्रति वर्ष पहले ज्येष्ठ को डक्-चोम्पा में और अगले दिन अर्थात ज्येष्ठ के दूसरे प्रविष्ठे को गाँव में मेले का आयोजन करने का निर्णय लिया गया।

डक्-चौंपा में नवनिर्मित पवित्र स्थान में एक पुराना और बड़ा दीपक रखा हुआ है, जो हर आने-जाने वाले का ध्यान आकर्षित करता है। श्री उमर चन्द नेगी ने बताया कि लगभग 20 वर्ष पूर्व एक बार असरंग खड्ड से जंगी गाँव तक कुछ मजदूर (नेपाली शेरपा) डक्-चौंपा के नीचे नहर बनाने का काम कर रहे थे। उन्होंने रात में डक्-चौंपा के ऊपर एक विशाल ज्वाला देखी। अगली सुबह वे उस स्थान पर गए और इस दीपक को पाया। शेरपा इस दीपक को नेपाल ले जाना चाहता था, लेकिन ग्रामीणों की आपत्ति के कारण वह ऐसा नहीं कर सका। ग्रामीणों ने उस दीपक को मन्दिर में रखवा दिया। उस घटना के बाद, नेपाली हर साल इस पवित्र स्थान की यात्रा करने लगे है। यहाँ हर साल के पहले ज्येष्ठ को लगने वाले मेले में शामिल होने के लिए विभिन्न स्थानों से बड़ी संख्या में नेपाली पहुँचते हैं।

खुनु लोतोः-ऊपर कहा जा चुका है कि 'खुनु लोतो' एक तिब्बती वार्षिक पंचांग है, जो बौद्ध जगत के लिए लम्बे समय से लिप्पा गाँव से जारी किया जा रहा है। जैसा कि पहले ही उल्लेख किया गया है, शेरप थरचिन ज्योतिष के एक महान विद्वान थे। उनके बेटे लामा देवा राम ने खुनु लोतो को एक नया आकार दिया और तिब्बत से शिक्षा प्राप्त करने के बाद, उन्होंने 1901 में दिल्ली से बारह आना (पचहत्तर पैसे) की लागत से खुनु लोतो का प्रकाशन शुरू किया। उनके बेटे सोनम दुबग्ये ने लोतो तैयार करने के लिए काफी मेहनत की। हालाँकि, वे अपने पिता की तरह विद्वान नहीं थे। लेकिन तब भी खुनु लोतो का प्रकाशन जारी रखा। चरणबद्ध तरीके से सोनम दुबग्ये द्वारा लोतो की कीमत बारह आने से बढ़ाकर दो रुपये प्रति कॉपी कर दी गई। अपने जीवन काल में संगे छूपेन ने लामा लाल चंद नेगी की सहायता से अलग खुनू लोतो बनाना भी शुरू किया। इस प्रकार बौद्ध जगत के लिए लिप्पा गाँव से दो पंचांग प्रकाशित होने लगे।

खुनु लोतो को तैयार करने के लिए एक विशेष प्रक्रिया का पालन करना होता है। कच्चे कार्य करते समय गणना के लिए कागज का उपयोग नहीं किया जाता है, बल्कि काली रेत का उपयोग किया जाता है। खुनू लोतो की कच्ची गणना के लिए लोहे की शलाका रूपी लेखनी का इस्तेमाल किया जाता है। कागज का उपयोग सख्त वर्जित है। वर्तमान में एक खुनू लोतो लामा कलजंग नीमा द्वारा पिछले 35 वर्षों से तंजीन प्रेमी के बेटे थुबदन ग्येल्थन (गेशे डिग्री धारक) की मदद से तैयार किया जा रहा है जबकि दूसरा खुनु लोतो मिथम याछो (विद्यासागर नेगी) द्वारा तैयार किया जा रहा था। लामा कलजंग नीमा द्वारा तैयार किए जा रहे खुनु लोतो पंद्रह हजार प्रतियाँ प्रकाशित की जा रही है और विद्या सागर नेगी द्वारा तैयार खुनु लोतो की सात हजार प्रतियाँ प्रकाशित की जा रही हैं।

गाँव-अन्द्रोली, डाकरघर- घनागु घाट
तहसील-अर्की, जिला-सोलन
हिमाचल प्रदेश-171102 / मो. 9418033783
Email id.
nemcandroli@gmail.com

1 गुम-टोवंग-ता अर्थात नीचे झुकी हुई टोपी रखने वाला

हेसण

-देवकन्या ठाकुर

देवदार के घने जंगलों को अन्धेरा धीरे-धीरे अपनी आगोश में ले रहा था और पेड़ों की फुनगियाँ आखिरी रोशनी में सुलग रही थीं। बूढ़ी भक्ति घर के बाहर खिड़की से आसमान की ओर झांकती है और दूसरी नज़र पहाड़ी से उसके घर तक आ रही पगडण्डी पर डालती है। एक थरथराती सी कौंध उसकी शिराओं में लपकी। उसके भीतर कोई चीज सिहर रही थी।

बेटी चंद्रा अभी तक घर नहीं आई, कहीं वह भी तो मेरी तरह, नहीं... नहीं...., यह सोचते हुए भी डर लगता है। आज शाउणी मेले में महादेव का रथ पूरी घाटी में फेरे के लिए गया है, पर मेरी बेटी चन्द्रा..., नहीं, यह तो नहीं हो सकता। ..महादेव! मेरी आस्था तुझमें है पर जमीन जायदाद ही सब कुछ नहीं होता? अपने आप से सवाल जवाब करती भक्ति ने खिड़कियाँ बंद कीं और बड़े से कमरे के कोने में बने चूल्हे में आग जलाई। वहीं पास पड़े रेडियो को भक्ति ऑन करने लगी। थोड़ी सी सेटिंग के बाद रेडियो से कुछ कटी हुई सी आवाज़ आने लगी और भक्ति अपने काम में लग गई।

''यह आकाशवाणी शिमला है। अब आप नैना देवी की आवाज में ये कुल्लवी लोकगीत सुनिये।''

''म्हारे देउया री तपोस्थली, म्हारे देउया री तपोस्थली
भीया भादरा के नांइदे नौठे, खुरक जड़ा न बशाई लो
म्हारे देउया आये संगमां नहांदे, संगे हेसणी आई ओ
म्हारे देउये धीनी जीमी लो जगहा, जुगा-जुगा बे डाई ओ।''

मन के अंगारे और चूल्हे की आग की गर्मी अब भक्ति के माथे से पसीने के रूप में टपकने लगी। इस लोकगीत ने जैसे उसकी दुखती रगों पर वार किया हो। भक्ति ने सिर से अपना काला धाठू उतारा और उससे अपना मुँह पोंछा। चूल्हे के पास से उठी, दरवाजा और खिड़कियाँ खोल दीं और वहीं दीवार के सहारे बैठ गई। आसमान से बूढ़ा चाँद भक्ति को देख रहा है और वह स्याह होती जा रही है। 'सांस भी नहीं ले पा रही हूँ। थोड़ी देर आँखें बंद कर लूँ...।'

सोचा कुछ शान्ति मिलेगी मन को, आँखें खुलीं भी तो अतीत के कलेवर में। उसने देखा, दस-ग्यारह साल

की भक्ति अपनी अम्मा के साथ नाउ गाँव में शाउणी मेला देखने जा रही है। तीन फूल वाले, सफेद पटटू, सिर पर लाल धाठू, माथे पर लाल बिंदी, नाक में लाल फूली, कानों में गोखड़ु, गले में चंद्रहार, हाथों में मेंहदी, बांहों में चाँदी की चूड़ियाँ, पैरों में बिछुए और पायल पहने भक्ति की अम्मा आज स्वर्गलोक की अप्सरा लग रही है। चेहरे पर ऐसा तेज कि कोई दूसरी स्त्री तो उसके सामने टिक न पाये। भक्ति की आँखें धूप से नहीं अपनी अम्मा के चेहरे के तेज से चमक रही थीं।

''अम्मा! तुम आज बहुत सुन्दर लग रही हो।'' अम्मा को चूमते हुए भक्ति बोली और उसकी गोद में बैठ गई।

''अच्छा, अब तुम भी अच्छे कपड़े पहनो, आज तुम भी मेरे साथ नाउ गाँव चलोगी। वहाँ आज से शाउणी मेला है और तुम हमेशा मुझसे अपने पिता के बारे में पूछती थी। वहाँ आज तुम्हारे पिता भी आएंगे।'

''अच्छा... ? फिर तो मैं जरूर चलूँगी और अपने पिता से मिलूँगी।''

पहाड़ की पगडंडियाँ चढ़ते हुए तकरीबन दो घण्टे में भक्ति और उसकी अम्मा नाउ गाँव पहुँची। मन्दिर पहुँचने से पहले गाँव के हर घर की औरतें भक्ति और उसकी अम्मा को अनाज, रुपये और रंग-बिरंगी चुन्नियाँ देती रही। वह जिस भी घर के सामने से जाती, लोग हाथ जोड़कर उन्हें प्रणाम करते और सबकी नज़र बस भक्ति की अम्मा पर ही टिकती। थोड़ी देर में वह दोनों मन्दिर के पास पहुँची।

''अम्मा! पिताजी कहाँ हैं?"

''अभी मन्दिर में पूजा हो रही है। बाहर यह ढोल नगाड़ों पर कनैत बजाई जा रही है। पूजा पूरी होते ही तेरे पिता जी बाहर आएँगे।''

''तो उनके आने से पहले हम अन्दर चलते हैं, मन्दिर में ही उनसे मिलेंगे।''

"भक्ति! हमारी जात के लोगों को मंदिर के अन्दर नहीं आने देते। तुम्हारे पिता तुमसे मिलने यहीं आएँगे।'

"अच्छा अम्मा। पर यह बताओ, यहाँ तो सब आदमी ही हैं, औरतें क्यों नहीं आई?"

"बेटी, देवकार्यों में औरतें हिस्सा नहीं लेतीं यहाँ सिर्फ हेसण ही आती है।"

"हेसण... ? अम्मा ये हेसण कौन है?" भक्ति ने जिज्ञासावश पूछा।

"हेसण मैं हूँ।" अम्मा बोली। इतने में महादेव का देवरथ मन्दिर से बाहर आया। ढोल-नगाड़ों की आवाज चारों दिशाओं एवं पहाड़ियों से टकराकर गूँजने लगी। अम्मा ने देवरथ की ओर इशारा करते हुए कहा,

"ये हैं तुम्हारे पिता महादेव।" इतना कहकर अम्मा महादेव के आगे जाकर नाचने लगी।

"अरे मुजरा लगा! मुजरा..., हेसण का।" भीड़ में से आवाज आई। भक्ति भीड़ से बाहर निकलकर एक ओर पत्थर के चबूतरे पर बैठ गई। अम्मा खूब नाचती है, महादेव का देवरथ भी खूब झूमने लगा। सारी भीड़ बस अम्मा और महादेव को देखती रही और भक्ति महादेव को।

'क्या सच में महादेव मेरे पिता हैं...? हाँ, हाँ... क्यों नहीं! तभी तो महादेव अम्मा के साथ खुशी से झूम रहे हैं।' भक्ति बहुत खुश थी कि उसके पिता कोई ऐसे वैसे नहीं हैं, बल्कि स्वयं महादेव हैं।

फिर उस रात भक्ति और अम्मा महादेव के कारदार के घर रुके। भक्ति तो बस रंग बिरंगी चुन्नियाँ देखने लगी। इतनी सारी चुन्नियाँ और अपनी अम्मा का इतना सम्मान देखकर बहुत खुश हो रही थी।

"अम्मा! सब लोग तो आज सिर्फ आप को ही देख रहे थे, खुद महादेव भी।"

"हाँ! अब मेरे बाद तो तू ही महादेव की हेसण बनेगी, तो तुझे भी लोग इतना ही मान-सम्मान और आदर देंगे।"

"अच्छा! जब मैं बड़ी हो जाऊँगी तो क्या मुझे भी लोग रंग बिरंगी चुन्नियाँ देंगे?"

"हाँ हाँ! क्यों नहीं, तुम्हें भी लोग बहुत सारी रंग-बिरंगी चुन्नियाँ देंगे, तुम मेरी बेटी जो हो।"

अम्मा से बात करते हुए कब भक्ति को नींद आ गई पता ही नहीं चला। सुबह उठी तो अम्मा कमरे में नहीं थी कमरे से बाहर निकली तो कारदारनी बोली, अम्मा तो रात को ही कारदार के साथ चली गई थी।

इसके बाद भक्ति महादेव की हर पूजा यात्रा और जाच में अम्मा के साथ जाती थी। मुजरा के गीत और नृत्य की शैली अब वह अच्छे से सीख गई थी। भक्ति अब सोलह साल की हो गई थी। एक दिन बैसाख के संक्रान्त के पहले दिन कुछ देउलू उनके घर आये और अम्मा से कहने लगे,

"अब भक्ति बड़ी हो गई है। महादेव की इच्छा है कि इस बार संगम नहाने से पहले तुम्हारी विरासत भक्ति को सौंप दी जाए।"

"जैसी महादेव की इच्छा जी। मैंने तो पूरी उम्र महादेव की हर आज्ञा का पालन किया है। अगर महादेव चाहते हैं कि भक्ति अब हेसण का कार्यभार सम्भाले, तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है जी। अब हमारी गति तो हेसण बन के ही होती है।"

देउलुओं ने बैशाख संक्रान्ति को भक्ति को महादेव के मन्दिर में हाजिर होने को कहा और चले गये।

अगली सुबह भक्ति स्नान करके अपनी अम्मा के गहने और पटटू पहनकर तैयार हुई। भक्ति आज स्वर्गलोक की अप्सरा लग रही थी, लेकिन भक्ति की अम्मा ने अब साधारण लिबास पहना था। भक्ति अपनी अम्मा के साथ मन्दिर पहुँची। चारों ओर ग्रामीणों की भीड़ आज भक्ति को देखने के लिए उमड़ पड़ी, भक्ति बहुत खुश थी, महादेव का गूर और पुजारी भक्ति को मन्दिर के मुख्य द्वार के सामने बिठाकर मन्दिर के बाहर पूजा-पाठ करने लगे। बकरे की बलि दी गई। गहने, कपड़े और पटटू के ढेर लग गये। ग्रामीणों के हर घर से भक्ति के लिए भेंट लाई गई। ढोल नगाड़ों की थाप के बीच महादेव का देवरथ मन्दिर से बाहर लाया गया।

फिर पुजारी ने कुछ कागज भक्ति के हाथ में रख दिये। भक्ति पढ़ना-लिखना तो जानती नहीं थी, उसने चुपचाप वह कागज अपने हाथ में पकड़े रखा, फिर कारदार बोले,

"भक्ति! तुम्हारे लिये महादेव ने डोभी गाँव की सीमा पर तीन बीघा जमीन दी है। अब इस जमीन पर तुम्हारा अधिकार है।" भक्ति ने खुश होकर अम्मा की ओर देखा और जमीन के कागज अम्मा को सौंप दिए।

''अच्छा भक्ति मैं यह सामान लेकर घर जाती हूँ। तू अब महादेव की हर आज्ञा का पालन करना। महादेव जहाँ भी फेरे में जाएँ, संगम नहाने जाएँ, तू साथ ही जाना। तेरे साथ कारदार देउलू, गूर और पुजारी भी जाएँगे।''

यह कहकर भक्ति की अम्मा सामान समेटकर घर की ओर चल पड़ी। आज एक बार फिर सदियों से वक्त को घड़ी में कैद कर दिया गया है।

देवलुओं ने महादेव का रथ उठाया, भक्ति का पहला मुजरा हुआ। आगे-आगे ढोल नगाड़े, पीछे भक्ति और फिर महादेव घूमते हुए उन्होंने पूरे गाँव का फेरा लगाया। मन्दिर में रथ वापिस आने के बाद सब लोग बैठे और शाम को चर्चा हुई कि आज पहली बार हेसण किसके घर जाएगी।

''पहला हक तो जी, कारदार का होता है इसलिए हेसण आज मेरे साथ जाएगी।'' कारदार बोला।

''ठीक है। यह तो जी रीत है। कारदार का घर तो हेसण का पहला घर है।'' पुजारी बोला।

तो फैसला हो गया कि भक्ति हेसण आज कारदार के घर पर रहेगी। कारदार हेसण को लेकर अपने घर पहुँचा। कारदार की पत्नी ने घर की निचली मंजिल में हेसण के लिए बिस्तर बिछाया।

''हेसण रखना तो हमारी परम्परा है।'' कारदारनी, भक्ति हेसण से बोली।

''वैसे उम्र में तुम बहुत छोटी हो, पर क्या करें, महादेव की मर्जी है सब। अगर कोई दुख तकलीफ हो तो मुझे बताना इतना कहकर कारदारनी भक्ति को कमरे में अकेले छोड़कर चली गई। कमरे में बल्ब की रौशनी उसके बालों पर गिर रही थी चेहरा तपा हुआ सा चमक रहा था। एक ठंडा सफेद ताप जो देह की सतह पर भाप की तरह जमा रहता है।

भक्ति ने दीवार पर नज़र घुमाई, महादेव का कैलेण्डर एक दीवार पर टंगा हुआ था। कैलाश पर्वत पर तपस्यारत बैठे महादेव जैसे अपनी बंद आँखों से सब देख रहे हों और भक्ति उनका वरण करके उनकी शरण में आ गई हो। अब भक्ति महादेव की है और महादेव भक्ति के। थोड़ी देर बाद कारदार की बेटी खाना लेकर आई और कमरे में छोड़कर बिना कुछ कहे चली गई। भक्ति ने खाना खाया और दरवाजे के बाहर बरामदे में हाथ धोकर बिस्तर पर आकर वापिस बैठ गई। चुपचाप किसी होनी का इंतजार करती भक्ति कमरे में खामोशी से बातें करती है। दरवाजा खुला और कारदार कमरे में आया। भक्ति के पास आकर बैठ गया।

''तुम महादेव की हेसण तो दुनिया के लिए हो, लेकिन मेरे लिए तुम मेरी रानी हो।'' कारदार ने भक्ति हेसण का हाथ अपने हाथ में लेते हुए कहा। भक्ति घबराई, लेकिन बोली कुछ नहीं।

''तुम्हें सोने चाँदी के गहनों से लाद दूँगा, भक्ति। छोटी जात की होते हुये भी तुम्हें हमारे साथ रहने का अवसर मिला। एक हेसण का जितना रुतबा होता है, उसे तुम जल्दी ही जान जाओगी। फिर कारदार भक्ति हेसण को आभूषण और कपड़े भेंट करता है। वह एक खुमारी सी में उन फूलों जैसी हो गई जिसकी पत्तियाँ खिलने-खिलने को हैं। इसके बाद जो हुआ, जिसका भक्ति को अनुमान तो था, लेकिन हेसण होना देव समाज से आगे पुरुष समाज के लिये भी होता है, आज वह यह अच्छी तरह जान गई।

सुबह उठी तो कारदार कमरे में नहीं था। भक्ति हेसण बाहर आई तो कारदारनी ने उसे नहाने के लिए पानी दिया और बोली,

''कारदार जी तो सुबह ही चले गये महादेव के भण्डार में, तुम्हें बोला है कि अपना सामान लेकर मन्दिर में आ जाना।''

''जी कारदारनी जी।'' भक्ति ने सिर हिलाते हुए कहा और नहाने चली गई। अपनी अम्मा की तरह आज भक्ति तैयार हुई। उसने कारदार के दिए कपड़े और गहने पहने और अपना थैला लेकर कमरे के बाहर आई।

कारदारनी उसके लिए खाना लेकर आई, लेकिन भक्ति ने मना कर दिया। उसे महादेव के साथ अब कारदार से मिलने की भी जल्दी थी। मन्दिर जाते हुये उसे सब लोग देख रहे थे और एक दिन पहले बनी हेसण तो सबके लिए आकर्षण का केंद्र थी। आज भक्ति के रास्ते में खड़े देवदार अपनी ही छाया के भार में दबते नजर आ रहे थे।

भक्ति मन्दिर पहुँची, महादेव की पूजा हो चुकी थी। पुजारी ने भक्ति के पहुँचते ही उसे सभी नियम कानून समझा दिये कि कब कितने बजे उसे महादेव के सामने

हाजिर होना है, किस पूजा में नृत्य करना है और वर्ष भर में कितने दिनों के लिए महादेव के त्योहार, मेले और फेरा लगाने जाना है। भक्ति हेसण वैसे सब जानती थी क्योंकि उसकी अम्मा ने गीत और नृत्य की शिक्षा के दौरान यह सब बातें उसे बता दी थीं।

''आज से महादेव जी संगम नहाने की यात्रा पर भुईण जा रहे हैं और इस दौरान कई गाँवों में महादेव जी रुकेंगे तो तुमने बस महादेव की सेवा में हमेशा हाजिर रहना है।'' पुजारी बोला।

''जी पुजारी जी।'' भक्ति हेसण बोली पर उसकी बेचैन नजरें कारदार को ढूँढ रही थीं। महादेव की यात्रा शुरू हुई। देवरथ झूमते हुए संगम यात्रा पर चल पड़ा और भक्ति हेसण नाचते झूमते हुये महादेव के देवरथ के आगे चल पड़ी।

जिस भी गाँव में महादेव का देवरथ रुकता, महादेव और महादेव की हेसण भक्ति की बहुत सेवा होती। इतनी भेंटें मिलतीं कि भक्ति की आँखें चुंधिया जातीं। उसे कुछ सोचने विचारने का समय ही नहीं मिलता। दिन भर महादेव के साथ और रात में कारदार के साथ बीस दिन गुजर चुके थे। संगम नहाने के बाद वापसी का सफर शुरू हो गया था। आज भी एक गाँव में महादेव का पड़ाव था। दोपहर का समय था भक्ति महादेव के शिविर के पास सुस्ता रही थी। कारदार भी वहीं बैठा था

''कारदार जी! बड़े दिन हो गये आपको हेसण के साथ... वो आपके बगीचे वाला टैंक का कुछ बना कि नहीं। मेरे पास कागज दे देना जी, कर दूँगा।'' पंचायत प्रधान बोला।

''जरूर जी। मैं तो कई सालों से कोशिश कर रहा था। अब आप तो पंचायत के प्रधान हैं, मालिक हैं, आप तो किसी का भी टैंक मुफ्त में बनवा सकते हैं जी।'' कारदार बोला।

''तो ठीक है जी। आज हेसण जी की सेवा हम करेंगे आप आराम करो....।'' हँसते हुये प्रधान बोला ।

''हेसण तो जी महादेव की है। हम देउलूओं की है... जिस-जिसको सेवा करानी है तो करा सकते हैं जी... मैं क्यों रोकूँगा आपको। पर मेरा टैंक जरूर बनना चाहिए प्रधान जी।'' कारदार बोला।

''बन गया, समझो आप।'' प्रधान बोला।

भक्ति आंखें बन्द करके सब कुछ सुन रही थी। जिस कारदार को वह इतने दिनों में अपना समझ रही थी आज वह उसका परोक्ष रूप से सौदा कर रहा था। फिर उस रात भक्ति को प्रधान के साथ जाना पड़ा।

भक्ति हेसण होने का सही मतलब आज समझ गई थी और जान गई थी कि कारदार और सारे देउलू क्यों हेसण की इतनी खातिरदारी करते हैं। भक्ति महादेव की हेसण बन चुकी थी। अपनी माँ की ही तरह हर त्योहार,पूजा और मेले में रौनक बनती रही और फिर कभी कारदार और कभी अन्य देउलूओं के साथ रही। इस सदी की सबसे स्याह औरत 'हेसण' जिसे तस्मों से ज्यादा कस दिया गया था।

कुछ सालों बाद भक्ति ने एक बेटी को जन्म दिया। फूल सी बेटी चंद्रा और उसके पिता महादेव... ।

समय गुजरता गया, जो लोग भक्ति की माँ का आदर करते थे वह अब 'हेसण' को वह मान-सम्मान नहीं देते। भक्ति अब सोचने लग गई थी। वह अपने भीतर के अन्धेरे में उजाला ढूँढ रही थी। समय की नजाकत को देखते हुये भक्ति ने अपनी बेटी चन्द्रा को पढ़ाने का निर्णय लिया और चन्द्रा को लेकर स्कूल गई।

''नाम क्या है बच्ची का।'' अध्यापिका ने पूछा।

''जी, चन्द्रा।'' भक्ति बोली।

''पिता का नाम क्या है?'' अध्यापिका ने पूछा।

''जी, महादेव...।''

''क्या....'' अध्यापिका ने भक्ति से हैरानी से पूछा।

हँसते हुये इतने में गाँव के ही रहने वाले एक अध्यापक आये और बोले,

''अरे हेसण जी आप और महादेव की बेटी, आ गई स्कूल... ।''

अब वहाँ मौजूद सभी अध्यापक, भक्ति और उसकी बेटी का उपहास कर रहे थे और मासूम बच्ची चन्द्रा यह भी नहीं जानती कि यह लोग क्यों हँस रहे थे। भक्ति को आज महादेव की हेसण होना गवारा नहीं था। लेकिन समाज और प्रथाओं के इस जाल में वह पूरी तरह फंस चुकी थी। भक्ति के पैर वहीं फर्श पर गड़ गये। उसकी हालत उस चिड़िया की तरह हो गई थी जो उड़ना तो चाहती थी लेकिन अपने भीगे पंखों के साथ उड़ नहीं सकती थी।

भक्ति ने चन्द्रा को गोद में उठाया, गले लगाया और स्कूल से बाहर चली गई।

''अम्मा! ये लोग क्यों हँस रहे थे?''

''चन्द्रा बेटी! तुम बहुत पढ़ना और महादेव की हेसण नहीं उनकी बेटी बनना, हाँ वे तुम्हारे पिता हैं।' भक्ति भावुक होते हुये बोली थी और उसकी दोनों आँखों से आँसू छलक पड़े।

''अम्मा रो नहीं, तुम जैसा कहोगी मैं वैसा ही करूँगी।'' अपने नन्हें हाथों से अपनी माँ के आँसू पोंछते हुए चन्द्रा बोली।

अब चन्द्रा रोज स्कूल जाती। खूब पढ़ाई करती। लेकिन अध्यापक और उसके साथी चन्द्रा को हेसण कहकर चिढ़ाते। चन्द्रा इस सब की परवाह न करती और कक्षा में अव्वल आती। अब चन्द्रा नौवी कक्षा में पहुँच चुकी थी।

एक शाम चन्द्रा पढ़ने बैठी थी कि उसकी अम्मा पास ही अपने कपड़े और गहने बक्से से निकालने लगी।

''अम्मा ये कपड़े और गहने क्यों निकाल रही हो, कहीं जा रही हो?"

''बेटी, शाउणी मेला आ गया न, उसी की तैयारी कर रही हूँ।''

''अम्मा, तुम मुझे कभी शाउणी मेले में लेकर नहीं गई। इस बार मैं भी तुम्हारे साथ चलूँगी।''

''अपनी पढ़ाई पर ध्यान दे, क्या करेगी तू वहाँ जाकर।'' गुस्से में भक्ति बोली।

बेटी चन्द्रा की जिद के सामने माँ की नहीं चली और भक्ति उसे साथ ले जाने के लिए राजी हो गई। अगले दिन मन्दिर पहुँचकर भक्ति मुजरा करने लगी, सब गाँव वालों ने उसे भेंटें दी। भक्ति की बेटी चन्द्रा को कारदार का बेटा पूरे मेले के दौरान ताड़ता रहा। कारदार का बेटा भक्ति के पास आया और कहने लगा,

''अब चन्द्रा बड़ी हो गई है अब इसके हेसण बनने का समय आ गया है। आप बूढ़ी होने लगी हैं, कब तक मुजरा करेंगी। तो बोलो भक्ति हेसण जी, कब शुरू करें आपकी बेटी की हेसण बनने की विधिवत पूजा?"

भक्ति की आँखों के सामने थोड़ी देर के लिए अंधेरा छा गया। कुछ देर पहले मन्दिर के नीचे जो विषाद और विक्षोभ की भावना आई थी वह कहीं अलग न झूलती हुई भक्ति की आत्मा के चौखटे में फिट हो गई और वह चक्कर खाकर गिर गई। चन्द्रा ने अपनी माँ को सम्भाला, भक्ति ने लोगों की दी हुई भेंटें वहीं छोड़ दी और चन्द्रा को लेकर अपने घर के रास्ते लौटने लगी, परन्तु देउलूओं ने उनका रास्ता रोक दिया।

''अगर चन्द्रा हेसण नहीं बनी तो महादेव की रीत खत्म हो जाएगी। तुम्हारी तो गति भी नहीं होगी। नरक में भी जगह नहीं मिलेगी इस लड़की को।'' कारदार का बेटा बोला।

''मेरी बेटी महादेव की हेसण नहीं बनेगी, चन्द्रा महादेव की बेटी है।'' भक्ति चिल्लाकर बोली। मंदिर के बाहर हंगामा हो गया। सभी देउलू एक तरफ हो गये और भक्ति दूसरी तरफ।

''चन्द्रा इसी शाउणी मेले में हेसण बनेगी, नहीं तो तुम दोनों माँ-बेटी सजा भुगतने को तैयार हो जाओ।' गूर बोला।

''महादेव को नाराज मत करो। प्रलय आयेगी और इसके लिए तुम माँ-बेटी जिम्मेदार होंगी, क्यों कारदार जी?'' पुजारी बोला। कारदार चुपचाप सब देखता रहा और उसने सहमति में अपना सिर हिला दिया।

हंगामे के बीच भक्ति चन्द्रा का हाथ पकड़ कर घर के रास्ते की ओर ले गई। गाँव में बहुत तनाव की स्थिति पैदा हो गई। अब महादेव के देउलू कहने लगे कि शाउणी मेले के दौरान ही चन्द्रा को हेसण बनाया जाये। अगली सुबह गाँव के बुजुर्ग भक्ति के घर पहुँचे। भक्ति कुछ भी सुनने को तैयार नहीं हुई। चन्द्रा भी सहम गई थी और अम्मा के पीछे चुपचाप खड़ी सबकी बातें सुनती रही।

''भक्ति! आज फैसला होकर रहेगा। यह जमीन जायदाद छोड़नी पड़ेगी, अगर चन्द्रा हेसण नहीं बनी तो।'' महादेव का पुजारी बोला।

''नहीं, मैंने पूरी जिन्दगी महादेव की सेवा की है। मैं यह जमीन वापिस नहीं दूँगी' भक्ति बोली।

''तू ऐसे नहीं मानेगी। ऐसा करो, इन दोनों को महादेव के दरबार में ले चलो। महादेव जो फैसला करेंगे, वही होगा।'' कारदार का बेटा बोला।

''हाँ... हाँ! ले चलो दोनों को।'' बाकी देउलू बोले भक्ति और चन्द्रा अब महादेव की शरण में थे। सारे

ग्रामीण भक्ति और चन्द्रा को कोसने लगे। आज तो गाँव की महिलाएँ भी मन्दिर में यह तमाशा देखने आई हुई थीं। गूर मन्दिर के बाहर आया और भक्ति और चन्द्रा को माफी माँगने के लिए कहने लगा। लेकिन भक्ति ने यह ठान ली थी कि वह चन्द्रा को हेसण नहीं बनने देगी। मन्दिर के आँगन में जलते अंगारे डाल दिये गये और गूर ने भक्ति और चन्द्रा को उन अंगारों पर चलने की सजा सुना दी।

कारदार की पत्नी ने भक्ति को समझाने की कोशिश की, ''देख भक्ति, तेरी उमर तो निकल गई, अब क्यों अपनी बेटी का जीवन बरबाद कर रही है। तेरी बेटी से शादी तो कोई करेगा नहीं। ऊपर से अगर इसका हुक्का पानी भी बंद हो गया, तो यह खाएगी क्या।''

भक्ति चुपचाप कारदारनी की बातें सुनती रही।

''भक्ति! तू घर चली जा, चन्द्रा को हेसण बनने दे। अगर महादेव रुष्ट हो गए तो प्रलय आ जाएगी। तब तो काहिका भी इस पाप का धो नहीं पाएगा। वैसे भी यह देउलू तेरी बेटी को हेसण बना कर ही छोड़ेंगे।''

भक्ति को कारदारनी की बात समझ में आ गई थी। उसने जो डोर थामी थी उससे उसके हाथ में एक जख्मी लकीर बन गई थी। कारदारनी के लफ्जों के कटोरे में जहर था। आज भक्ति मौत से ज्यादा मर रही थी। चन्द्रा को गाँववालों ने पटटू और गहने पहनाकर पूजा में बैठा दिया। गूर और पुजारी पूजा विधि पूरी करने में जुट गए। सभी देउलुओं और कारदार के बेटे के चेहरे पर जीत की खुशी झलक रही थी। जबकि कारदार एक कोने में चुपचाप बैठा था।

भक्ति दूर बैठकर चुपचाप देख रही थी। चन्द्रा पाषाण की भांति पूजा स्थल पर बैठी 'हेसण' बनने जा रही थी। इतने में महादेव का रथ मन्दिर के बाहर आया और खूब झूमने लगा। ढोल-नगाड़ों की हाँफती हुई धुन घाटी की ठंडी हवा की सरसराहट और धुंध में रेंगती हुई चन्द्रा के कानों में पड़ी। चन्द्रा भी पूजास्थल से उठकर महादेव के साथ मुजरा करने लगी और गीत गाने लगी। आज तो हवाओं को जैसे पागल कुत्ते ने काट रखा है। भक्ति यह सब देख नहीं पाती और वहाँ से भागती हुई अपने घर की चौखट पर पहुँचकर गिर पड़ी।

गिरने के एहसास से ही भक्ति की आँखें खुल गईं उसने देखा कि चूल्हे में आग बुझ गई है और रेडियो में शरर की आवाज़ आ रही है। थोड़ी देर भक्ति वैसे ही उस पीले कलान्त अन्धेरे में बैठी रही। भक्ति ने उठकर रेडियो बंद कर दिया और दरवाजा खोलकर पहाड़ी की ओर से आने वाली पगडण्डी पर झांककर देखने लगी। ऊपर आसमान की नीली चादर से चाँद भी झांक रहा था। पहाड़ी पर हर चीज एक महीन पीले चूरे में चमकती नजर आ रही थी। वह दरवाज़ा बंद करने लगी, पर फिर एक बार न जाने क्यों वह बाहर झांककर देखती है। चाँद की मध्यम रोशनी में पगडण्डी पर उसके घर की ओर कोई आकृति सी बढ़ रही है। नजदीक आने पर देखती है,

''चन्द्रा तुम! बेटी तुम आ गईं?''

''हाँ अम्मा, मैं वापिस आ गई।'' भक्ति चन्द्रा के पीछे खड़े व्यक्ति को देखती है,

''कारदार जी आप...?''

''हाँ भक्ति मैं, हम तीनों एक अज्ञात नियति में बन्धे हुये थे। चन्द्रा महादेव की नहीं, मेरी बेटी है और मैंने आज सबके समक्ष यह स्वीकार किया है कि चन्द्रा का पिता मैं हूँ....। सदियों से महादेव की हेसण के नाम पर तुम्हारे घर की लड़कियों के साथ अन्याय हुआ है। आज मैं यह अन्याय अपनी बेटी के साथ नहीं कर सकता था।'' फिर कारदार ने भक्ति और चन्द्रा को गले लगा लिया।

Buransh Lodge,
MIG House No.18,
Housing Board Colony,
Sanjauli, Shimla-171006, HP

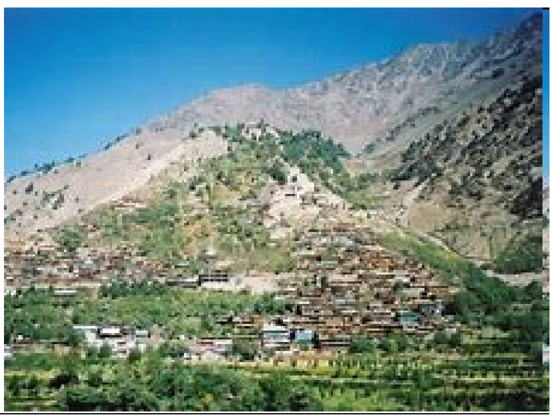

स्मार्टफोन -डॉ विजय कुमार पुरी

''हैं....!" राकेश हक्का बक्का रह गया। रक्षा की आँखों से आँसू बह रहे थे। वहीं, टूटी दीवार से पीठ सटा कर बोली-

''हे भगवान! अब क्या होगा? बड़ा माड़ा वक्त है जी। दो दिन से बच्चों को थोड़ा बहुत जो कुछ बचा था, बनाकर खिला दिया और रात को दूध पीकर गुजारा हो रहा है। है न... पर बच्चों को भरपेट भोजन चाहिए ही चाहिए।"

रक्षा की बात सुनकर रमेश भी कराह उठा, ''सही बोल रही है रक्षा तू। भूखे भजन न होय गोपाला।" कुछ अंतराल के बाद रमेश ने चुप्पी तोड़ी, ''क्यों न हम गौरी को बेच दें। चार पैसे आ जाएंगे।"

इतना सुनना था कि बच्चे जोर से चीख पड़े - ''नहीं बेचनी हमने गौरी गाय, नहीं बेचनी बस.....।"

बच्चों की चीखो-पुकार व रक्षा की सिसकियों के पश्चात वातावरण में मरघटी सन्नाटा पसर गया। उदासियों से घिरे रमेश की आँखों के सामने सारा दृश्य सिनेमा रील के माफिक घूमने लगा। गौरी जो छः वर्ष पहले हमारी घरपण गाय मोरां ने जनी थी। सारा परिवार खुशी से झूम उठा था। दोनों भाई-बहनों का वही खिलौना थी। उन्हीं के साथ उछलती कूदती थी। उसे जब वे छुपकर आवाज लगाते तो दोनों कान खड़े कर सुनती। न मिलने पर रंभाती, गुस्सा करती और वे दोनों सामने आते तो गौरी भी झूठ-मूठ रूठ जाती। वे पुचकारते तो मुंडी हिला कर बात करने से मना कर देती। उनके तो प्राण बसते थे उस में। बच्चे रोज उसे एक एक टुकड़ा रोटी का देते। अगर किसी दिन भूल जाएँ तो याद दिलाने के लिए आवाज लगाती, अपना सिर हिलाती और गले में बंधी घंटी बज उठती। बच्चों को याद आता, वे दौड़ जाते उसके पास। वहाँ देखते तो उसने चारे को छुआ भी नहीं होता। यह बच्चों और बछिया का मूक स्नेह था।

धीरे-धीरे समय गुजरता गया। बच्चे बड़े हो स्कूल जाने लगे और गौरी भी बछिया से गाय बन गई, दूध देने लगी और घर की आई-चलाई में सहयोग करने लगी।

रक्षा और रमेश बहुत मेहनती थे। सुबह-शाम दोनों खेतों में काम करते, फिर जहाँ काम मिलता रमेश वहाँ

दिहाड़ी लगा लेता और रक्षा मनरेगा में। अच्छा गुजर बसर हो रहा था। मतलब दो वक्त की रोटी और परिवार में खुशियाँ ही खुशियाँ थीं। बच्चे अपनी दुनिया में मस्त हो जाते और अपनी गौरी के साथ चरागाह में चले जाते।

दोनों बच्चे खेलते-कूदते, उछलते-गाते और कभी मन करता तो पढ़ भी लेते। सब कुछ सही चल रहा था कि चीन के बुहान शहर से वायरस निकला। वायरस से पूरे विश्व में महामारी फैलना शुरू हो गई। शुरू-शुरू में तो लगा कि यह बीमारी अभी बाहर के देशों में ही रहेगी पर सब को धत्ता बताते हुए धीरे-धीरे अपने देश के बड़े शहरों में उसने पाँव पसारना शुरू कर दिए। वहाँ से छोटे छोटे नगरों, कस्बों और गाँवों की ओर रफ़्तार पकड़ने लगी। अब महामारी की भयावहता से हर किसी के मन में खौफ भरने लगा क्योंकि कोरोना का कहर एक छोर से दूसरे छोर तक मौत का तांडव बन टूट पड़ा। मीडिया के माध्यम से इस महामारी से होने वाले, दिल दहलाने वाले दर्दनाक दृश्य सामने आ रहे थे। खबरों से यह जानकारी मिली कि यह संक्रामक रोग है। एक दूसरे के साथ सम्पर्क में आने से बड़ी तेजी से फैल रहा है।

विशेषज्ञों ने सरकार को कई सुझाव दिए। उनमें से एक था, बाहर नहीं निकलने का और फिर एक दिन सरकार ने इसे लागू करने के लिए पहले कर्फ्यू फिर लॉकडाउन लगा दिया। जो जहाँ था वहीं रह गया। जीवन की इस संकट घड़ी में सभी अपने घरों व क्वार्टरों में बंद हो गए। कुछ दिन इसी विश्वास में काट दिए कि हालात जल्दी सुधरेंगे। पर न लहर थमी न हालात ठीक हुए। सात दिनों का कर्फ्यू और लॉकडॉउन दिनों से हफ्तों और फिर महीनों बढ़ने लगा तथा बढ़ने लगी लोगों की चिंताएँ जो घरों से, अपनों से दूर पर हालात से मजबूर। ऐ कुदरत! यह कैसा तेरा दस्तूर है? और बीमारी फैलाने वालों को कोसते रहते। ग्रामीण क्षेत्रों में भी जो घरों में कैद हो गए थे, वे भी अब घुटन महसूस कर धीरे-धीरे टूटने लगे क्योंकि अनाज के कनस्तर, जूझने

के अस्त्र और पहनने के वस्त्र जवाब दे रहे थे।

रमेश द्वारा गाय बेचने की बात से क्षुब्ध और आत्मीय पीड़ा से कराहते बच्चे रोते-बिलखते ही माँ की गोदी में सो गए। रक्षा भी बहुत दुखी थी क्योंकि गौरी से उसे भी बहुत ममता थी। दूध निकालने से लेकर चारा-पानी तक, गोबर उठाने से लेकर झाड़ बुहारी तक अधिकतर समय गौरी से ही बात होती थी। दूसरी तरफ रमेश इसी उधेड़बुन में कोई फैसला नहीं कर पा रहा था। उसे परिवार की चिंता अंदर ही अंदर खाए जा रही थी। ठनठन गोपाल रमेश करवटें बदल रहा था। नींद आँखों से कोसों दूर थी और ऐसी स्थिति में नींद आएगी भी कैसे? परिवार भूखा सो गया। खाने के लाले पड़ गए थे। उस पर एक और चिंता, बच्चों की पढ़ाई। कैसे करें प्रबंध? जैसे तैसे करके स्कूल का होमवर्क करने के लिए कापियाँ खरीद ली थीं। बच्चों को बड़ा आदमी बनते देखना चाहते थे, वे दोनों। सपनों पर हौसलों की उड़ान थी, पर अब इस महामारी ने सब मटियामेट कर दिया। दूसरे लोगों के बच्चे ऑनलाइन क्लासेज लगा रहे हैं। स्मार्ट फोन में स्कूल का काम आता था। कुछ दिन तक बच्चे अपने ताऊ, बांकेलाल के घर जाते रहे। उनके पास फोन की सुविधा थी। बच्चे पढ़ते, होमवर्क उतारते तो कभी-कभी आपस में उलझ पड़ते। खूब हो हल्ला होता। छीना-झपटी में एक दिन फोन छिटक गया। शुक्र है कि टूटा नहीं, पर बांकेलाल के सब्र का बांध टूट गया। आखिर बांकेलाल ने उनको अपने घर आने से मना कर दिया। मायूसी और गुस्से से भरे आर्यन और शबनम अपने घर पहुँचते ही फूट पड़े, ''हमने नहीं जाना ताऊ जी के घर।''

''पर क्यों? हुआ क्या, बताओ तो।'' पिताजी ने पूछा।

''पापा! शब्बू फोन से काम उतार रही थी कि फोन गिर गया। उसने जानबूझकर नहीं गिराया था। बस राधा के पापा गुस्सा हो गए। बोले - 'चले जाओ यहाँ से। दोबारा मत आना यहाँ। आए तो देख लेना, टांगे तोड़ दूँगा।'' आर्यन गुस्से से लाल-पीला हो बोलता गया। थोड़ी देर बाद गुस्से का उबाल ठण्डा हो गया। फिर बच्चों ने पापा की ओर देखा, ''पापा हम फोन लेंगे न।'' शबनम ने याचक निगाहों से पूछा।

''हाँ ...हाँ पापा, ले लो न फोन।'' आर्यन ने भी उचकते हुए कहा।

''लैणा ही पोणा अड़यो। लोकां दे घरे जान्दे बच्चे खरे नीं लगदे। क्या बोलदे तुहां।'' रक्षा ने भी अपनी बात रखी।

''आं... अपर, तिज्जो तां पता ही है अपनी माड़ी हालत। पर करदा कोस्त। कुछ जुगाड़ करना ही पोंणा।'' रमेश ने कह तो दिया पर उसके लिए यह सब आसान नहीं था। मतलब स्मार्टफोन खरीदना उनके लिए पहाड़ खोदने के माफिक था। गहरी साँस लेने के बाद रमेश कहने लगा- ''लॉकडाउन की वजह से ध्याड़ी लग नहीं रही है। पैसा-धेला हा नीं। भांडे-टींडे खाली-खाली। जिंदा रहणे को भोजन तो चाहिए न। मदद मांगे भी तो किससे। यहाँ सब अकल़ोयो-वकल़ोयो हैं, डरे हुए हैं, सहमे से हैं। औणे वाल़े टैम में क्या होणा, कुछ पता नहीं। गाई बेचणे ते अलावा कोई चारा नीं सुज्झा दा।

''आपको क्या लगता, मिंजो क्या दुख नीं। अपणे हाथों पाल़ी गौरी को विदा करने का। काल़जा फट रहा है मेरा। पर सौदा-पत्ता भी खरीदना है। माना कि राशन-पाणी गाँव वाली दुकान से मिल जाएगा पर थोड़े-बहुत पैसे तो देने पड़ेंगे..... और फोने जो तो नगद नारायण चाहिए न, कि नहीं। अब आप ही बोल्ला ..... सारे बोल्ला ना।'' रमेश ने भारी मन से कहा।

''दिक्खी लेया अड़यो। तुहां यो जेह्ड़ा ठीक लग्गा दा, करी लेया।'' उदासी भरे शब्दों में हालात को समझते हुए रक्षा बोली।

आर्यन और शबनम कुछ बोल न पाए, पर मौन स्वीकृति के अलावा कोई चारा भी नहीं था।

ग्राहक ढूंढने का सिलसिला शुरू हो गया। हर कोई अपने-अपने हिसाब से मोलभाव कर रहा था। मौके का फायदा जान सभी क्रेता कम से कम दर में गाय खरीदने को आतुर थे। कुछ भाव ज्यादा देने की बात कर रहे थे, पर किस्तों में। लेकिन रमेश को तो इस वक्त नगद नारायण की जरूरत थी। आखिर मंगू महाराज ने तीस हजार की गाय दस हजार में रमेश से खरीद ली। मरता क्या न करता। बड़े भारी और बोझिल मन से गौरी की रस्सी रमेश ने मंगू महाराज के हाथों सौंप दी। गाय को मंगू महाराज के साथ जाते देख सभी की अश्रुधार झर-झर बहने लगी। गौरी भी मुड़-मुड़ के देखती, उसकी आँखों से भी आँसू बह रहे थे। यह देख बच्चे और रक्षा तो

फूट-फूट कर रोने लगे। दस हजार रुपये रमेश की बेबसी को देख रहे थे, चिढ़ा रहे थे। गौरी के जाने के बाद सब सूना-सूना हो गया। रमेश कभी खाली गौशाला को देखता तो कभी खाली टीन कनस्तरों को। बच्चों के मुख की मलिनता देखता तो दिल में छुरियाँ चुभ जातीं। इस असहनीय एवं हृदय विदारक दृश्य से वह दूर जाना चाहता था। अकेला होकर दहाड़ें मार रोना चाहता था।

अगले दिन रमेश ने पैसे उठाए और बाजार की तरफ चल पड़ा। कदम उठाता, सिसकता, चलते चलते कुछ देर बाद उस टियाले पर पहुँच गया, जहाँ वह गौरी के लिए चारा लाते हुए बैठता था। ये सब याद आते ही फूट-फूट कर रो लिया। जी हल्का होने पर पुनः चल दिया और पहुँच गया बाजार। यहाँ-वहाँ घूमते उसे मोबाइल की दुकान दिख गई। कुछ देर सोचा और फिर अनायास ही कदम उसे दुकान के अंदर ले आए।

''शाह जी! मोबाइल लैणा है।'' हिचकते हुए रमेश ने कहा।

''कौन सा? किस कंपनी का?'' बिना नजरें उठाए लैपटॉप पर काम करते हुए दुकानदार ने पूछा।

''अब मैं क्या जानू कंपनी-शम्पनी। पर बच्चों तांईं लैणा है। पढ़ा दे हन्न स्कूल में। कम्म आता है नां फोन च। उनके वास्ते।'' रमेश बोला।

''कितनी रेंज तक?'' अपना काम करते हुए लाला फिर बोला।

''रेंज.... ?''

''ओ भोल़ेया! कितणे कि पैसेयां वाल़ा?'' लाला ने नजर उठाकर रमेश की तरफ देखते हुए पूछा।

''अच्छा-अच्छा, ज़्यादा पढ़ेया नीं है ना मैं। पर बच्चे जरूर पढ़ाणे, काबल बणाणे। तुहां दस्सा कोई चौं-पंजां ज्हारां वाल़ा।''

''ओ छोटू! अंकल को फोन बताना। चार-पांच हजार रेंज वाला।'' लाला ने अपने कर्मी को आवाज दी।

''जी सर!'' छोटू एकदम रमेश के पास आ गया।

''यहाँ आ जाओ अंकल जी।'' काउंटर पर रमेश को एक-एक करके चार-पाँच प्रकार के फोन दिखाए और हर फोन के फीचर बताने लगा – ''अंकल इसका बैटरी बैकअप ज्यादा है। यह जो काले वाला है न इससे फोटो बड़ी अच्छी आती है। लाल वाले में बिना लीड से रेडियो भी बजता है। सभी एकदम मस्त हैं और सस्ते भी। आप यह नीला वाला ले लो, रेट लग जाएगा। इसमें भी बहुत ज्यादा फीचर हैं।'' छोटू हर फोन के बारे में समझा रहा था, जो उसके बिक्री कौशल के हुनर को दर्शा रहा था। सेल्समैन का यही तो कमाल है।

सहमे हाथों से रमेश ने नीला वाला फोन उठा लिया। उसे आगे-पीछे से देखने लगा। उसे क्या लेना फोन के फीचर से, जिसकी उसे जानकारी ही नहीं। बस देखने में अच्छा लगा तो अपनी इच्छा ज़ाहिर कर दी।

''ये वाल़ा दे देया। बांका लग रहेया है।''

''ठीक है अंकल।'' छोटू ने फोन पैक किया और रमेश को लाला के पास कैश काउंटर पर भेज दिया।

''कितणे पैहे लाला जी।''

''चार हजार दे दो जनाब।'' रमेश ने पैसे दिए और दुकान से बाहर आ गया। सभी लोग जल्दी में थे। रमेश समझ गया कि बाजार बंद होने वाला है और पुलिस गश्त पर आ जाएगी। इसलिए उसने भी जल्दी-जल्दी घर जाने के लिए कदम बढ़ा दिए।

गाँव में पहुँचकर कुछ रुपए दीनू बनिए के चुकाए। गुजारे लायक कुछ दालें, तेल, हल्दी, नमक, चावल, आटा लिया और घर आ गया। लम्बा सफर, सिर पर भारी बोझा, भयंकर गर्मी के कारण रमेश पसीने से तरबतर हो चुका था। रक्षा उसकी बाट जोह रही थी। उनको आते देख बोल पड़ी --

''आई गै तुहां। मिंजो तां फिकर होएयो थी। बड़ा टैम लगा दिया।'' रक्षा ने सिर से गठरी उतारते हुए पूछा।

''हाँ..... आई गेया। दूर बाजार तक गेया था। सुण भला, मैं बच्चेयां दे पढ़ने तांईं इक्क फोन भी लेई आन्दा। अब नीं जाएंगे म्हारे बच्चे पड़ोसियों के घर।'' रमेश ने चारपाई पर बैठते हुए कहा।

रक्षा लाए हुए सामान को समेटने लगी। थके-हारे रमेश ने पानी पिया और फिर चारपाई पर लेट कर सुस्ताने लगा। बच्चे जो किताबों से उलझ रहे थे, फोन की बात सुन रमेश के पास आ गए। लगभग एक घंटे बाद रक्षा ने भोजन करने के लिए सब को बुलाया। सभी ने भोजन किया। रक्षा भी रसोई का काम करके चारपाई पर आ गई, जहाँ बच्चे और उनके पिता मोबाइल में मगजमारी कर रहे थे। धीरे-धीरे बच्चों को फोन ऑपरेट करने आ

रहा था। आज स्कूल द्वारा भेजा होमवर्क वे घर पर ही करने लगे।

गाँव में सुगबुगाहट शुरू हो गई कि रमेश ने गाय बेचकर फोन खरीदा है। बात इतनी फैली कि मीडिया में हाईलाइट हो गई। प्रिंट, इलेक्ट्रॉनिक और सोशल मीडिया वाले धड़ाधड़ उनके घर आने लगे। पहले-पहल तो अच्छा लगा कि उनकी वेदना सार्वजनिक हुई। पीड़ा कम हुई पर कुछ दिनों बाद खबर का ध्रुवीकरण हो गया। कभी इस एंगल से तो कभी उस एंगल से उनकी स्टोरी चलने लगी। कई बार तमाशा बना पूरे परिवार का। मीडिया वाले सवाल नहीं पूछ रहे थे बल्कि उनके गहरे जख्मों को हरा कर रहे थे। कुरेद-कुरेद कर नमक-मिर्च लगा रहे थे। उनकी बातों से, उनके व्यंग्य बाणों से बच्चों के कोमल और नाज़ुक मन विदीर्ण हो गए। घिन्न सी आ रही थी अब उन्हें सामने आते। मीडिया में सब कुछ दिखाया गया। कुछ पक्ष में तो कुछ विरोध में भी। पर अच्छी बात यह कि खबर चली और खूब चली। बात स्थानीय प्रशासन से होते हुए जिला प्रशासन और फिर प्रदेश सरकार तक पहुँची। कई समाजसेवी संस्थाएँ सहयोग के लिए आगे आईं। सरकार के दरबार में यह बिंदु चर्चा का विषय बन गया। आनन-फानन में सरकारी नुमाइंदे भी पहुँचे। मदद भी मिली फिर भी हैरान-परेशान रमेश को कुछ भी नहीं सूझ रहा था। मन में द्वन्द्व मचा हुआ था, कभी स्वयं को कोस रहा था तो कभी प्रफुल्लित भी हो रहा था। एक कोने से आवाज़ आ रही थी, पूछ रही थी कि सरकार द्वारा चलाई गई गरीबों के लिए कल्याणकारी योजनाएँ धरातल पर पहुँची हैं या नहीं। कौन उनका हक मार जाता है? मानवीय संवेदनाएँ कहाँ खो जाती हैं स्थानीय नेताओं की, जिनको किसी पात्र व्यक्ति की दुर्दशा दिखती नहीं। मात्र वोट प्राप्त करना ही उनका ध्येय है। यह प्रश्नचिन्ह आज भी मुँह बाए खड़ा है.......।

रमेश लम्बी सांस छोड़ते हुए आसमान की तरफ ताकते हुए कहता है कि काश.......यह कदम पहले उठता तो उसकी गौरी का खूंटा खाली न होता।

ग्राम पदरा पोस्ट ऑफिस हंगलोह
तहसील पालमपुर जिला कांगड़ा
हिमाचल प्रदेश- 176059
मोबाइल 7018516119/9816181836

बुखार

-डॉ उमेश प्रताप वत्स

सोनू का बुखार बढ़ता ही जा रहा था। सोनू की माँ तड़पते हुए लगातार कहे जा रही थी कि यह डेंगू तो मेरे बच्चे की जान लेकर ही छोड़ेगा। दवा का भी कोई असर नहीं पड़ रहा था। पड़ोसियों के कहने पर मैं पास के गाँव में एक नामी वैध के पास गया परन्तु रास्ते में बाइक पंक्चर हो गई। फिर बेटे का ध्यान आते ही मैं पैदल ही वैद्य जी के पास पहुँचा।

शाम हो चली, मौसम भी खराब था। वैद्य जी दवाखाना बंद करने वाले थे, मैं झपटकर दुकान में पहुँचा। मेरी बात सुनने के बाद उन्होंने मुझे दवाई की एक पुड़िया बनाकर दी तथा दवाखाना बंद करके चले गए। मैं अभी थोड़ी दूर ही चला था कि एक अधेड़ महिला बच्चे को गोद में लेकर रोती-बिलखती दवाखाने की ओर भागी जा रही थी। उसके पूछने पर मैंने बताया कि वैद्य जी तो चले गए। वह वहीं बैठकर बिलखने लगी। बोली, देखो मेरे बच्चे का शरीर कैसे तप रहा है, ताप टूटने का नाम ही नहीं ले रहा है। महिला का रुदन मुझे अंदर तक साल रहा था। क्षणभर सोचने के बाद दवाई की पुड़िया उस महिला को देकर डरा हुआ-सा उल्टे पाँव घर आ गया। सोनू की माँ के उलाहने का डर भी सता रहा था। परन्तु जैसे ही मैंने घर में पाँव रखा तो हैरान हो गया।

मैंने देखा, सोनू अपनी माँ के साथ खेल रहा था। सोनू की माँ बोली, देखो जी! अब बुखार उतर गया है, सोनू बिल्कुल ठीक है। मैं एकटक अनिमेष सा माँ-बेटे को निहारते हुए सोच रहा था, न जाने यह दवा का असर था या उस महिला की दुआओं का।

umeshpvats@gmail-com
-14 शिवदयाल पुरी, निकट आईटीआई
यमुनानगर, हरियाणा - 135001
9416966424

अपने तो अपने होते हैं

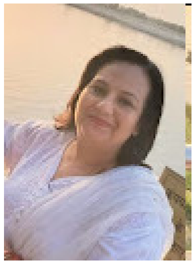

सारिका चौरसिया

बात लगभग चार दशक पुरानी है, एक बहुत बड़ा सयुंक्त परिवार था। कई सदस्यों और ढेरों रिश्तेदारों वाला!

उस परिवार के मुखिया ने अपने अंतिम समय में अपने द्वितीय पुत्र से एक मूक आश्वासन लिया था, परिवार और व्यवसाय को सम्भालने का। एक छत के नीचे रहते हुए भी अलग-अलग विचारधारा रखने वाले सभी पारिवारिक सदस्यों को सदैव साथ ले कर चलने का। अपने छोटे भा बहनों की देखभाल और सुरक्षा का!!!

पिता की मृत्यु पश्चात पुत्र तमाम व्यवसायिक परेशानियों और परिवारिक उलझनों भरी डगर पार करता सभी दायित्व निभाता चला जाता है, एक वक्त आता है जब उसकी मेहनत और समझदारी से सब कुछ व्यवस्थित और स्थिर नज़र आता है तभी अचानक परिवार में दुखों के बादल छाने लगते हैं, उसका छोटा भाई गुर्दे की बीमारी से ग्रसित हो जाता है, जिसका अभी पारिवारिक जीवन शुरू ही हुआ था, कई मुश्किलों का सामना करते हुए गुर्दा दान कर्ता के सम्पूर्ण जीवन भरणपोषण की जिम्मेदारी वहन के वचन के साथ प्रत्यारोपण होता भी है। किन्तु वर्ष पर्यंत पुनः असफलता की स्थिति और अस्वस्थता का सामना करना पड़ता है। इस बार स्थिति अत्यंत विकट थी, एक तरफ़ उसके सामने अस्वस्थ भाई और उसके छोटे-छोटे बच्चे तथा परिवार की अन्य जिम्मेदारियाँ और दूसरी तरफ़ स्वयं अपनी पत्नी और बच्चे।

हालात बहुत नाज़ुक और समय बहुत कम था.. ..और एक गम्भीर फ़ैसला उसके सामने था। वह जानता था उसकी पत्नी उसके फैसले को सहर्ष स्वीकार करेगी।

तत्क्षण उसने अपने अंग दान से अपने भाई को मृत्यु मुख से निकालने का प्रयास किया। नियति से लड़ने का एक असंभव सा प्रयास! किन्तु उसने हारना नहीं सीखा था।

लेकिन ईश्वर ने उसकी नहीं सुनी विधि को कुछ और मंजूर था। वह शरीर और मन दोनों से ही आधा हो चुका था। किन्तु आधा बचा मन अभी भी हताश नहीं हुआ था। दो प्यारे-प्यारे नन्हें बच्चे और एक निरीह स्त्री भी अब उसकी शरण में थे। तमाम विरोधाभासों और पारिवारिक विडम्बनाओं के बावजूद भी उसने भाई की ब्याहता को मायके वापस नहीं जाने दिया।

अब उसकी तीन नहीं चार बेटियाँ थी और एक नहीं तीन बेटे थे, दम्पति सब का निर्वाह कर रहे थे। आज सबसे बड़े पोते को गोद में लेते हुए अपने दिवंगत भाई की ऊष्मा और खुशबू उसके दिल में उतरती चली गयी। माता पिता का आशिर्वाद बरस रहा था। अपने तो अपने होते हैं।।

C/oRamdas Anil kr. Sarraf
Chaurasia Bhawan
Dhundhi katra
Mirzapur /Uttar prdesh.
Mob.9452185352/6393356440

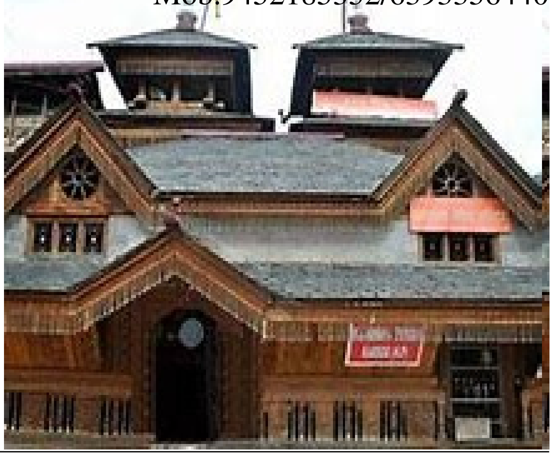

मुझे बोनसाई नहीं होना

–राजकुमार जैन राजन

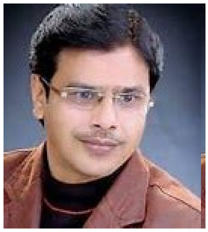

मुझे
उस रास्ते की तलाश है
जो बचा सके
संस्कारों की दरकती हुई
सीमा रेखा को
और जो याद दिलाएँ
लोंगों को
क्षण भंगुर अस्तित्व की

मुझे अपनी जिंदगी से
बहुत उम्मीदें हैं
अपने मन की
अबोध शाखाओं में उगे
बड़े बड़े सपनों को
सच होते देखना चाहता हूँ
मुझमें है उद्भट संघर्षशीलता
उन्मुक्त जिजीविषा
और हिलोरें मारता जुनून

पता नहीं जीवन क्रम
कहाँ टूट जाये
अपने
हिमालयी अहसासों के साथ
देश व समाज के लिए
कांटों से खुद को बचाते हुए
मेहनत के खूब फूल
उगाना चाहता हूँ
सिरहाने पड़े ख्वाबों को
श्रम मंत्र बनाकर
सफलता का स्वर्णिम
प्रकाश फैलाने के लिए
हमारे सपनों के
पेड़ों की टहनियाँ
छोटी होगी
तो बेवक्त सूख जायेंगी
पतझड़ रचने लगेंगे षड्यंत्र
हमारा अपना होने का अर्थ
मिट जाएगा
क्योंकि सत्य सदा सत्य है
बौने सपने देखकर
मुझे बोनसाई नहीं होना!!

–संपर्क : चित्रा प्रकाशन, आकोला – 312205, (चित्तौड़गढ़), राजस्थान। मो.9828219919
rajkumarjainrajan@gmail-com

स्मृति

–डॉ. लता अग्रवाल 'तुलजा'

मन के मरुस्थल में
चले आते हैं
स्मृतियों के काफिले
तेज तपन भरे
बवंडर अतीत के
चिलचिलाती धूप ऊपर
बीते अनुभवों की
तपती रेत–सा
दहकता अकेलापन
चलना है विवशता
इस जीवन की
मरुभूमि में
नहीं जहाँ कोई
स्नेहिल स्मृतियों का
छायादार दरख़्त
चहुं ओर से तपाती देह
सोख लेती है नमी
आँखों की
आकृति, प्रकृति की
कठोर इतनी
क्योंकर मेरे हिस्से आई
संभावनाओं की
दीवारें भी अब
खिसकने लगी हैं
मर्यादा के द्वारपाल
सिसकने लगे हैं
वजूद निगलता जा रहा है
जीवन का असीम रेगिस्तान
पिघलते जा रहे हैं जज्बात।

30 सीनियर एम्. आई. जी , अप्सरा कोम्प्लेक्स । सेक्टर, इंद्रपुरी भेल क्षेत्र भोपाल –462022

मार्ग संत्रासी हुआ है

–कृष्ण कुमार 'कनक'

वह गया है छोड़कर जबसे
कि तब से मौन हूँ मैं,
कौन है वह जो समय के साथ
सन्यासी हुआ है।

यातनाओं के पहर ने कब हिलाई नींव मेरी,
और कब संवेदना के गाँव तक आई उदासी।
अनबुझी सी प्यास के विश्वास का जीवंत है शिव,
भाग्य ने श्रद्धा-भवानी को किया छल से प्रवासी।
गौतमी के बुद्ध-सा शाश्वत कहाँ तप-त्याग मेरा,
किन्तु मेरी चेतना का
राम वनवासी हुआ है।

वास्तु या ज्योतिष न उपयोगी किसी संकल्पना में,
कल्पनाओं के महज प्रासाद हैं आधे-अधूरे।
किंवदंती हो चुका इतिहास सब उपलब्धियों का,
कम बहुत संभावनाएँ, हों कभी ये चित्र पूरे।
सामने प्रत्यक्ष है जीवन किसी दर्पण सरीखा,
और सुधियों का सहज प्रतिबिंब
आभासी हुआ है।

किस नदी की धार को सौंपे गए मेरे समर्पण,
क्या पता किस द्वीप के विस्तार तक पहुँचा उजाला।
किन्नरों के शब्द अब भी गूँजते आशीष बनकर,
वाम-अंगी फड़-फड़ाहट ने मुझे अब तक सँभाला।
हस्त रेखा में विधाता ने लिखा क्या कुछ, पता क्या?
किंतु है यह ज्ञात मेरा मार्ग
संत्रासी हुआ है।

ईश, कठ, मांडूक्य या फिर छंद, वृहदारण्य ये सब,
महज हैं कुछ पुस्तकें पर उपनिषद मैं ही हुआ हूँ।
आस्तिक या नास्तिक दर्शन विदित सब वेद तुमको,
व्यक्त या अव्यक्त मैं जो भी कि जब तुमने छुआ हूँ।
व्याकरण की शुद्धता जाँचें यहाँ के सब मनीषी,
ज्ञात है इतना कि अब कुछ 'कनक'
मृदुभाषी हुआ है।

संपर्क/ 'कनक-निकुँज',ह्व
गुँदाऊ, लाइन पार,ह्व
फिरोजाबाद- 283203 (उ.प्र.)
मो. 7017646795, 9259648428
E-mail- Kanakkavya@gmail-com
csclkbV www-pragyahinditrust-in

भ्रष्टाचार

भ्रष्टाचारियों से,
कब और कैसे निपटा जाए
एक गाँव के दो किसानों ने,
सही ढूँढा बहुत उपाय।
दफ्तर का बाबू बोला, सरकारी काम है
जल्दी करवाओ।
रिश्वत देने को पैसे नहीं हैं
तो अनाज ही लेकर के आओ
किसानों की सुलगती आत्मा ने
रिश्वत के सारे पन्ने मोड़ दिए
तीन बोरियों में भरकर
ऑफिस में चालीस साँप छोड़ दिए।
अधिकारियों के सिर से भाग गया
रिश्वत के भूत का साया
दो तो अभी तक कोमा में हैं
तीसरे को कल ही है होश आया।

ए4/159, सेन्चुरी पल्प एण्ड पेपर,
लालकुआँ (नैनीताल) उत्तराखण्ड-262402
मो. 9412329561, 8171723018
E-mail sajag.satyapal@gmail.com

रवि कान्त अनमोल

सिर ही झुकता न कभी हाथ उठा करते हैं
हम ख़ायालों में तेरे मस्त रहा करते हैं

हम सितारों से तेरी बात किया करते हैं
चाँद से तेरा पता पूछ लिया करते हैं

साँस आती है कभी साँस निकल जाती है
हम तेरे मोज़िज़े हैरत से तका करते हैं

इक तरन्नुम सा मेरी रूह पे छा जाता है
दिल के तारों को वो हौले से छुआ करते हैं

झूमने लगता हूँ पेड़ों की तरह मस्ती में
वो हवा बन के मुझे जब भी छुआ करते हैं

जब भी रुकते हैं तो रुकते हैं तेरे साए में
जब चलें हम तेरी जानिब ही चला करते हैं

दिल में उठती है तेरी दीद की हसरत जब भी
मन की आँखों से तुझे देख लिया करते हैं

ख़ुद से कुछ कर सकें इतनी नहीं कूवत अपनी
जो तेरा हुक्म हो हम बस वो किया करते हैं

ढूढ़ते फिरते हो तुम और ठिकानों पे हमें
हम किसी और ही दुनिया में रहा करते हैं

रवि कांत 'रवि'
जवाहर नवोदय विद्यालय, रौलन,
अम्बाला–134005

डॉ.आलोक कुमार यादव

चलो फिर ग़ैर से रिश्ता निभा कर देख लेता हूँ
मुसीबत पास अपने मैं बिठा कर देख लेता हूँ

मिला हमको जहां में जो ख़ुदा की वो इनायत है
ख़ुदा के दर पे सर अपना झुका कर देख लेता हूँ

नहीं मुझको पता कैसे सुरों में गीत गाते हैं
मगर फिर भी इसे मैं गुनगुना कर देख लेता हूँ

मिले सबको यहाँ पर हक़ रहे कोई न वंचित अब
सभी को रास्ता सच का दिखा कर देख लेता हूँ

नहीं मिलता जिन्हें भोजन कहीं पर दिख मुझे जाते
उन्हें दो वक्त की रोटी खिलाकर देख लेता हूँ

नहीं ख़ुद को कभी भी यूँ तो मैंने आज़माया था
यही वह वक़्त है अब आज़मा कर देख लेता हूँ

कभी आलोक ग़र मैं धैर्य अपना खो रहा होता,
तभी तस्वीर पापा की उठा कर देख लेता हूँ

एसोसिएट प्रोफेसर
विधि संकाय
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

डॉ राजेंद्र सिंह 'साहिल'

बीत गये वो सारे दिन
मेरे और तुम्हारे दिन

तुमने मुझ पर किये निछावर
मैंने तुम पर वारे दिन

तेरे नैन की कोर सरीखे
तीखे-से कजरारे दिन

खुली पोटली बीच राह में
बिखर गये बेचारे दिन

मैं भी तुम-सा रोक सका ना
गुज़र गये मन मारे दिन

चलो! कहीं से लौटा लायें
अपने, साथ गुज़ारे दिन

'साहिल' प्यारे दिन वे कितने
कितने प्यारे-प्यारे दिन

-1/338 'Swapnlok' Dashmesh Nagar “Mandi Mullanpur Dakha“(Ludhiana) - 141101
“Cell - 9417276271

डॉ नलिन

आधुनिकता का चलन रखना
पूर्वजों की भी कहन रखना

साँझ तक मन में सहेजे ही
भोर की शीतल तपन रखना

शून्य-सा रखना हृदय निशिदिन
भावनाओं की छुवन रखना

हाथ जलते हैं, जलें अपने
कर्म में नित नित हवन रखना

लौटकर परिवार में मन को
प्रेम में फिर फिर मगन रखना

रास्ता अच्छा कठिन होता
पर कठिनता में गमन रखना

हो कभी मिलना नलिन से तो
मत मुखौटे को पहन रखना

4 ई 6 , तलवंडी, कोटा - 324005
राजस्थान, मो. 9413987457
dr.nalin1948@gmail.com

अदीक्षा देवांगन 'अदी'

जब भी तुम प्यार-महब्बत करना,
बे-अदब इश्क़ कभी मत करना!

ज़िंदगी खेल नहीं है कोई,
ज़िंदगी से न अदावत करना!

प्यार की आग नहीं बुझती है,
इस लिए प्यार किया मत करना!

भीड़ हो और लगे तन्हा तो,
तू मिरा रोज पढ़ा ख़त करना!

याद है मुझको मिरा बचपन भी,
रोज ही रोज शरारत करना!

इश्क़ में और 'अदी' क्या होगा,
फिर महब्बत में तिजारत करना!

गाँव-लूर्गी ख़ूर्द,
पोस्ट भेंडरी-497223
जिला बलरामपुर (छत्तीसगढ़)

प्रिय पधारो प्रेम-पथ पर

–बृज राज किशोर 'राहगीर'

प्रिय पधारो प्रेम-पथ पर पुष्प पलकों के बिछाऊँ।
चिर प्रतीक्षारत हृदय की पीर से परिचय कराऊँ।।

चक्षुओं के द्वार करके पार पहुँचे चित्त तक तुम
और मन की वीथियों में कर रहे विचरण निरन्तर।
हो परम निष्णात सम्भवतः लुभाने की कला में,
छा गए हो एक सम्मोहन सरीखे चेतना पर।
गुण-कुशलताएँ तुम्हारी हैं बहुत, कैसे गिनाऊँ?

मैं विरह के शूलवंशी क्षत्रपों का कुल-पुरोहित,
पीढ़ियों से वेदना के यज्ञ करवाता रहा हूँ।
प्रीति के रण में पराजित शूरवीरों को सुनयनी,
मोह-बंधन से छुड़ाकर मोक्ष दिलवाता रहा हूँ।
हूँ स्वयं ही जब हताहत, क्या करूँ, किस राह जाऊँ?

है विरह-ज्वाला भयंकर, आग तन-मन में लगी है,
नैन प्यासे हैं बहुत, अब सामने आ दरस-जल दो।
धड़कनें बन बस गए हो रूह की गहराइयों में,
हे सुमुखि अब तो मिलन की कामनाओं को सुफल दो।
तुम तनिक आगे बढ़ो तो आरती का थाल लाऊँ।।

शा अपार्टमेंट, रुड़की रोड,
मेरठ-250001 (उ.प्र.)
मोबाइल: 91-9412947379
मेल : brkishore@me-com

आगे दौड़ पीछे चौड़

नित नई घोषणा होती है
होते हैं नये-नये एलान,
स्याही सूखे बाद में उनकी
आ जाते अगले फरमान,
बातें खाली करने की बस
लगी हुई है सबमें होड़,
कह सकते हैं इसको हम
आगे दौड़ पीछे चौड़।

अब तक की कारगुज़ारी पर
एक बार तो डालो नजर,
शुरू किये हैं काम बहुत पर
पूरे ना हुए अब तक जो मगर,
उनकी प्रगति दिखे ना अगर तो
फिजूल है फिर यह सारी दौड़,
कहलाएगी अंत में यह बेशक
आगे दौड़ पीछे चौड़।

गाँव नगोड़ी, डाक घर साच,
तहसील व जिला चम्बा
(हिमाचल प्रदेश)
संपर्क सूत्र - 7018558314

किन्नौर और लाहौल स्पीति

–डॉ. वी.के. शर्मा

हिमाचल प्रदेश में यह क्षेत्र शीत शुष्क मरुस्थल का भाग है। इसमें किन्नौर और लाहौल–स्पीति जिले आते हैं। तीनों क्षेत्रों की बोली, संस्कृति, पहरावा और रीति–रिवाज़ भिन्न भिन्न हैं। इन सभी क्षेत्रों को देखने का मन बहुत वर्षों से था।

आज से लगभग 35 वर्ष पहले हमारे केन्द्र प्रभारी ने लाहौल–स्पीति जाने का प्रोग्राम बनाया। मई के दूसरे सप्ताह में डॉ आर. पी. अवस्थी, डॉ डी. पी. शर्मा, के. डी. वर्मा, ज्ञान चौहान और मैं, क्षेत्रीय बागवानी अनुसंधान केन्द्र, मशोबरा, शिमला के सरकारी वाहन द्वारा चले। चालक भूप राम हमारे साथ चला क्योंकि हम लोग सरकारी काम के लिए जा रहे थे। हमने सरकारी विश्राम गृहों में पहले ही बुकिंग करवा ली थी। नारकंडा में थोड़ी देर के लिए रुके क्योंकि चालक ने वहाँ मंदिर जाना था, इसलिए हम भी मंदिर चले गए। वहीं नेगी के होटल में चाय पी। कुमारसेन होते हुए नीरथ में सूर्य मंदिर में माथा टेका और दत्तनगर होते हुये रामपुर से ज्यूरी होते हुए किन्नौर जिले में प्रविष्ट हुए।

बताते चलें कि किन्नौर हिमाचल के एक जिले का नाम है वैसे इस नाम का यहाँ कोई गाँव नहीं है। प्राचीन काल में इस क्षेत्र को किन्नर प्रदेश कहा जाता था और यहाँ रहने वाले किन्नर कहलाते थे। शताब्दियों से ये लोग यहाँ के मूल निवासी माने जाते हैं जिसका विवरण पुराने धार्मिक और पौराणिक ग्रंथों में मिलता है।

सब अपने नाम के साथ नेगी लिखते हैं। इनकी मुखाकृति हमारे से थोड़ी भिन्न है। इनकी बोली और पहरावा बिल्कुल अलग तरह का है। पुरुष पट्टी का लंबा कोट और पाजामा तथा विशेष प्रकार की गोल टोपी जिस पर आधी लाल या हरे रंग की बार्डर वाली पट्टी लगी रहती है, पहनते हैं। अधिक शीत होने पर इस पट्टी से कानों को ढक लिया जाता है। महिलाएँ ऊन की गर्म शाल को अपनी कमर के चारों ओर विशेष प्रकार से लपेटती हैं और ऊपर जैकेट होती है और पुरुषों जैसी ही टोपी होती है। इनके चाँदी के आभूषण भी कुछ भारी होते हैं। इनसे महिला का चेहरा लगभग छिपा रहता है। अधिक ठंडा क्षेत्र होने के कारण यहाँ सदैव ऐसा ही पहरावा रहता है। यहाँ की संस्कृति भी भिन्न है तथा धीमी गति की नाटी और गायन ही प्रचलित हैं। संस्कार केवल दो ही होते हैं। विवाह के अवसर पर और मृत्यु पर ही लोग एकत्रित होते हैं। मृत्यु होने पर शव को जलाने के लिए सभी लकड़ी लेकर आते हैं ताकि जिनके घर मृत्यु हुई है उन्हें लकड़ी लाने के लिए कठिनाई न हो। मृत व्यक्ति के लिए लकड़ी लाना एक प्रकार की उस व्यक्ति के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित करना है। महिलाएँ इस अवसर पर विशेष प्रकार के गीत गाती हैं।

आगे की सड़कें कम चौड़ी थीं, एक तरफ पहाड़ और दूसरी तरफ खाई या खुला मैदान। रामपुर से लेकर मनाली तक सड़क का निर्माण और रख रखाव केंद्र सरकार का डी.जी.बी.आर. विभाग करता है। राज्य सरकार की सम्पर्क सड़कें इस क्षेत्र के अन्दर के क्षेत्रों के लिए हैं। यह पूरा मार्ग 1961 के चीन और 1962 के पाकिस्तान के युद्ध के बाद ही सैन्य बल और सैन्य सामान को चीन और काश्मीर सीमा के पास उपलब्ध करवाने के लिए बनाया जाना आरंभ किया गया था।

वांगतू में पहला बड़ा पुल आया जो सतलुज नदी पर था। यहाँ प्रवेश करने पर पुलिस चौकी पर वाहन की आमद दर्ज करवानी आवश्यक थी। आगे की यात्रा बहुत सावधानी वाली होती है। एक तरफ गहरी खाई होने के कारण चालक को काफी सावधान रहना पड़ता है। वांगतू के आगे टापरी किन्नौर जिले का पहला बड़ा गाँव है। यह गाँव नदी के किनारे पर फैला हुआ है। यहाँ छोटा सा बाजार और कुछ सरकारी कार्यालय हैं। गाँव नदी के किनारे ही बसा हुआ है और मुख्य बाजार के साथ ही जुड़ा हुआ है। यहाँ हमने चाय–पान किया।

हमारा रात का विश्राम यहाँ के विश्राम गृह में था जो सतलुज नदी के दूसरी तरफ था। इस लिए हमें अंधेरा होने से पहले नदी के पार जाना था। नदी पार करने के लिए

पुल नहीं है। वहाँ झूले में बैठ कर ही पहुँचा जा सकता है। इस के लिए गाड़ी को इसी ओर पार्क करने के बाद अपना सामान लेकर हम झूले के पास पहुँचे। वहाँ पता चला कि झूले में थोड़े सामान के साथ एक आदमी जा सकता है क्योंकि इसे दूसरा व्यक्ति उस तरफ से खींच लेता है। साधारणतया झूला आधे रास्ते में अपने बोझ के कारण चला जाता है और जिस तरफ से जाना हो, उसे उधर खींच लिया जाता है वहाँ से या तो स्वयं ही लोहे के रस्से को खींचें अथवा कोई अन्य व्यक्ति बाहर से खींचे। रस्सा और झूला लोहा के हैं।

सबसे पहले ज्ञान ठाकुर झूले में बैठ कर उस पार चले गए क्योंकि वह पहले भी झूले में बहुत बार जाते रहे हैं। उसके बाद डॉ. अवस्थी को जाने के लिए कहा। वे बहुत डरे हुए थे, उन्होंने पहली बार झूला देखा था और उनके लिए यह पहला अनुभव था। डरते डरते वे बैठे और दूसरी तरफ पहुँच गए। इसके बाद डॉ. डी.पी. शर्मा और मैं तथा अंत में वर्मा जी झूले से पार आए। चालक ने गाड़ी में ही रहना ठीक समझा था। विश्राम गृह पास ही था और इसमें लाइट नहीं थी। चौकीदार ने कमरे खोल दिये, मोम बत्ती जला दी और उसे रात के खाने, सवेरे चाय और फिर ब्रेकफास्ट के लिए कह दिया। सवेरे नहाने के लिए गर्म पानी का प्रबंध भी करने को कहा।

मेरी उत्सुकता इस बात की थी कि Flora Simlenais के लेखक Collett (पति-पत्नी) ने इसी विश्राम गृह में रहकर शिमला क्षेत्र में पाई जाने वाली वनस्पति के विवरण का मुख्य काम यहाँ ही किया था। 1900 के आसपास उस पुस्तक का प्रकाशन हुआ था और उन परिस्थितियों में कितना परिश्रम किया होगा। उस समय लाहौर से यहाँ तक पहुँचने में15 दिन लगते थे। शिमला तक तो सड़क थी और वहाँ से ठियोग होते हुए रामपुर तक खच्चर रोड थी परन्तु इसके आगे पैदल का मार्ग ही था। शिमला से यहाँ तक घोड़े पर या पैदल ही आना जाना होता था।

अगले दिन सवेरे नौ बजे हम रामनी-जामनी गाँव के लिए चल पड़े। सारा रास्ता ही पैदल का था। पहले आधा किलोमीटर ठीक था फिर खड़ी चढ़ाई, फिर तीन किलोमीटर ठीक समतल जैसा था। रास्ते में सेब के बागीचे थे जिनके निरीक्षण के लिए हम लोग इस क्षेत्र में आए थे। रामनी-जामनी गाँव में पहले ही संदेश भेज दिया था कि आज वहाँ एक सभा होगी और सेब से संबंधित जानकारी के लिए विषय विशेषज्ञों से बातचीत होगी। हमारे एक पूर्व सहयोगी श्री टी.सी.पी. नेगी का इस गाँव में घर और बागीचा है। उनके पिता जी आजकल गाँव में ही थे। वे इस क्षेत्र से पहले शिक्षक थे और वे लाहौर में पढ़े थे। उन्होंने वहाँ मंदिर में पूजा और भंडारे का आयोजन किया था। सवेरे साढ़े दस बजे से बारह बजे तक सभा और बाद में पूजा की समाप्ति पर आरती और भंडारा होगा।

सभा में 50 के लगभग किसान आए थे। सभा के लिए सभापति नेगी के पिता जी ही थे। उनसे मिलकर हमें बड़ी प्रसन्नता हुई क्योंकि वे बड़े अनुभवी और योग्य व्यक्ति थे। हमने पहले क्षेत्र की बागवानी संबंधित आवश्यक जानकारी एकत्रित की और फिर उनकी समस्याओं का यथासंभव समाधान किया। विश्वविद्यालय तकनीकी समस्याओं का समाधान कर सकता है परन्तु उद्यान विभाग द्वारा आर्थिक सहायता और सब्सिडी पर सामान मिलने की देरी के लिए उन्हें अवगत करवा सकता है। इस पर सभी प्रसन्न थे कि उनकी समस्याओं को सुनने के लिए आज विश्वविद्यालय के विशेषज्ञ हमारे गाँव आए हैं।

मंदिर को देख कर लगा कि यह किन्नौर की संस्कृति का नहीं है। यहाँ मूर्ति स्थापित की गई हैं और सफेद कपड़े वाले बौद्ध मत वाले झंडे नहीं थे। पता चला कि यहाँ की संस्कृति शिमला की रोहडू तहसील जैसी है। इस पहाड़ी की पिछली तरफ रोहडू क्षेत्र लगता है। यहाँ के निवासियों की बोली भी अधिकतर रोहडू जैसी है परन्तु कुछ किन्नौर के शब्द भी हैं। इन लोगों को देख कर ऐसे लग रहा था जैसे हम रोहडू में हैं। वहाँ से तीन बजे हम वापस चल पड़े। रात को टापरी में ही रहना था।

सतलुज नदी के किनारे बने विश्राम गृह, टापरी में रात बिता कर प्रातः ब्रेकफास्ट कर हम किन्नौर के लिए चल पड़े। यहाँ से रास्ता थोड़ा और संकरा हो जाता है, इस पर यात्रा बहुत भयभीत करने वाली परन्तु रोमांचक तथा बहुत ही आकर्षक थी। सड़क एक तरफ़ पहाड़ के बिल्कुल साथ है और दूसरी तरफ़ गहरी खाई और सतलुज का तेज़ बहाव है। बाईं तरफ़ देखो तो सुंदर हरे भरे पहाड़। कुछ ही

किलोमीटर जाने पर सड़क के बाईं ओर एक माता का मन्दिर है। मंदिर बहुत साफ़ सुथरा और सुंदर था। इसे दीपक परियोजना वाले सैनिकों ने बनवाया था और वही देखभाल करते हैं। यहाँ एक पुजारी हर समय रहता है। यहाँ से ही तराण्डा ढांक आरंभ होता है। पहाड़ के साथ बस के आने जाने का मार्ग है। पहाड़ की चट्टान बहुत ही कठोर है और बस से लगभग 2 मीटर की ऊँचाई तक ही काट कर मार्ग बनाया गया है।

यह मार्ग बड़ी मेहनत और कौशल का प्रदर्शन है। बस के ऊपर कोई पत्थर नहीं गिर सकता। दस किलोमीटर के लगभग ऐसा ही मार्ग है। दूसरी तरफ़ से आ रहे वाहन को निकालने के लिए कहीं कहीं थोड़ी चौड़ी सड़क है। सीधा मार्ग बहुत कम है , सारा मार्ग संकरा और मोड़ वाला है। ऐसा कहा जाता है कि मंदिर होने के कारण अब तक कोई दुर्घटना नहीं हुई है।

कुछ और आगे जाकर करछम कस्बा था जहाँ सांगला की ओर से बास्पा नदी आती है और सतलुज नदी में मिल जाती है। सड़क से यह स्थान बहुत नीचे है। यहाँ हमने आधा घंटा के लगभग समय बिताया, ऐसा दृश्य बहुत कम देखने को मिलता है और फिर हम सब यहाँ पहली बार आए थे। ऐसा अवसर फिर मिले या न मिले। हमारे पास काफी समय था क्योंकि आगे हमने कल से अपना काम शुरू करना था।

थोड़ा आगे चलकर एक ढाबे पर खाना खाया। दोपहर का समय था और भूख भी लग रही थी। ढाबे वाले ने बड़ी अच्छी तरह खाना खिलाया, हमें आशा नहीं थी कि इस छोटी सी जगह पर इतना अच्छा खाना मिलेगा।

यहाँ से आगे पुआरी गाँव है, सड़क के दोनों ओर सेना का भंडार और वर्कशॉप हैं, कुछ दुकानें भी हैं। यहाँ से आगे कोई पैट्रोल पम्प नहीं है। यहाँ सतलुज नदी पर दूसरी ओर की घाटी में जाने के लिए पुल है और संकरी सड़क है। मुख्य सड़क नदी से 3 मीटर ही ऊँची है।

पुआरी से 3 किलोमीटर आगे बाईं ओर मुड़ती हुई सड़क है जो किन्नौर जिले के मुख्यालय को जाती है। यहाँ से तीन किलोमीटर पर शारबो है जहाँ प्रदेश के कृषि विश्वविद्यालय का क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र है तथा क्षेत्रीय जलवायु पर आधारित अनुसंधान किया जाता है, उसी के अनुसार कृषकों और बागवानों को प्रशिक्षण दिया जाता था। यह हमारे ही विश्वविद्यालय का केंद्र था और हमारा रहने का प्रबंध यहाँ के ही विश्राम गृह में किया गया था। शाम का समय था, सभी कर्मचारी और विशेषज्ञ अपने निवास को जाने वाले थे, परंतु विश्वविद्यालय के वाहन को देख रुक गये। कुछ मिलने के लिए रुके हुए थे। सभी ने मिलकर औपचारिक चाय-पान किया और हमारे रहने का प्रबंध कर दिया। केंद्र के प्रभारी वहीं रहते थे, शेष व्यक्ति अपने अपने घर चले गये। अत: अपना सामान आदि अपने कक्ष में रख कर हम थोड़ा टहलने निकले। वहाँ से किन्नर कैलाश की चोटी इस समय बड़ी धुंधली सी दिखाई दे रही थी।

रिकांगपिओ में यहाँ का मुख्यालय है और शारबो से दो मोड़ आगे से शुरू होता है और वहाँ से थोड़ा ऊपर जाने पर चीनी गाँव है, इस क्षेत्र में मंदिर बहुत कम हैं। लोग अधिकतर बौद्ध धर्म के अनुयाई हैं। यहाँ घर तो बहुत थोड़े हैं पर हैं सभी पक्के और सड़क के किनारे हैं और साथ ही सेब के बागीचे हैं। यहाँ से किन्नर कैलाश पर्वत की चोटी प्रात: बहुत साफ चमकती हुई दिखाई देती है। चोटी पर सदैव बर्फ पड़ी रहती है तथा यह त्रिशूल की तरह है मानो साक्षात शिव हों। इस चोटी का रंग प्रात: सफेद और सायं तक पीला हो जाता है।

शारबो से हम प्रात: नाश्ते के बाद स्पीति के लिए चल पड़े। हमारा अगला पड़ाव ताबो यहाँ से लगभग 150 किलोमीटर की दूरी पर है परन्तु वाहन द्वारा 7-8 घंटे लग जाते हैं क्योंकि सड़क तंग और बहुत घुमाव वाली है।

आगे बड़ा कस्बा पूह है, यहाँ तहसील कार्यालय तथा एस.डी.एम.का कार्यालय और कुछ होटल भी हैं। बाजार छोटा है पर सब आवश्यक सामान मिल जाता है। यह मुख्य मार्ग से थोड़ा ऊपर की ओर है। यहाँ से 5 किलोमीटर की दूरी पर 1960 के आसपास सेब की बागवानी को बढ़ावा देने के लिए उस समय के कृषि विभाग ने गार्डन कालोनी शुरू की थी जहाँ राज्य सरकार ने सेब की प्रमुख जातियों को लगाया ताकि स्थानीय लोग भी लगाएँ।

चिलगोजा भी इसी क्षेत्र में अधिक होता है। अंगूर और बादाम कुछ क्षेत्रों में होते हैं। चौलाई के बीज को सुखाकर आटा बनाकर रोटी बनाते हैं और उसे पानी और

गुड़ या अंगूर के साथ ब्रयू कर अंगूरी या घंटी (स्थानीय मादक पेय) बनाते हैं। पूह से आगे डबलिंग, रिब्बा, रारंग, भोकटू, स्पीलो, मुरंग (यहाँ कहते हैं पांडव आए थे और उनका दुर्ग है),नाको ताल और खाब है। यह सभी मुख्य मार्ग से थोड़ा ऊपर हैं। खाब के साथ ही सतलुज नदी पर एक छोटा पुल है । सतलुज का जल नीले रंग का है। पुल की चौड़ाई 8 मीटर और लंबाई 15 मीटर के लगभग होगी। इस नीले जल के साथ पुल से थोड़ा आगे स्पिती नदी का काला जल मिलता है। यह संगम स्थल है। दोनों नदियों की धाराओं को मिलते देख बड़ा अच्छा लगा। थोड़ा ही आगे समदो (चीन सीमा के साथ) है और वहाँ से स्पिती क्षेत्र आरम्भ हो जाता है।

लाहौल घाटी और स्पीति घाटी में कुछ समानताएँ हैं। दोनों भाग शुष्क शीतोष्ण मरुस्थल में हैं यहाँ वर्षा नहीं होती और बर्फ ही पड़ती है। समुद्रतल से 3050 से 4500 मीटर के लगभग ऊँचाई है तथा बन सम्पदा बहुत है। इनकी सीमा चीन और जम्मू-कश्मीर से जुड़ी है। स्पीति घाटी अधिकांश अनुपजाऊ है परन्तु लाहौल घाटी अधिक उपजाऊ है।

यहाँ से 4/5 किलोमीटर आगे अब काफी चढ़ाई और रोमांच भरी यात्रा है। आठ कैंची वाले मोड़ों के साथ सड़क है। थोड़ी-सी भी असावधानी हुई और दुर्घटना हो सकती है क्योंकि मोड़ बहुत तीखे हैं।

यहाँ से आगे लगभग समतल सड़क है और दस किलोमीटर की दूरी पर लरी गाँव है जहाँ कुछ हरियाली दिखाई दी। यहाँ पशुओं के लिए चारा लगाया गया है और पापलर के पेड़ लगे हैं। अपनी ही तरह के कुछ घर हैं और यहाँ पालतू पशु भी दिखाई दिए। यह सारा काम डैज़र्ट डिवैलपमैंट प्रोग्राम के अंतर्गत किया गया था। इतनी हरियाली इस क्षेत्र में पहली जगह देखी।

एक तरफ के पहाड़ बहुत अधिक ढाल वाले और बिना बनस्पति के हैं। यदि ऊपर से एक कंकर नीचे को लुढ़के तो उस की गति बंदूक की गोली से भी तेज़ हो जाएगी।ह्व

यहाँ से आगे थोड़ा खुला हुआ क्षेत्र मिला, पास ही ताबो गाँव है। यह स्पिती घाटी का एक प्रसिद्ध बड़ा गाँव बौद्ध धर्म का एक केन्द्र है। यहाँ ताबो की प्रसिद्ध गुफा या मठ है और उसकी दीवारों पर बहुत सुन्दर चित्रकारी है जो सभी जैविक रंगों से बनाई हैं। इस कक्ष में बिना प्रकाश के पता नहीं कैसे चित्रकारी की होगी और वह अब भी वैसी ही है।

यहाँ 1996 में कालचक्र अंतरराष्ट्रीय बौद्ध सम्मेलन ताबो मठ की स्थापना की सहस्राब्दी के उपलक्ष्य में मनाया गया था। यहाँ का वातावरण बड़ा सुंदर लगा। एक ओर ऊँचा पहाड़ तथा नीचे की ओर स्पीति नदी, बीच में मैदान और दूसरी तरफ ऊँचे हरे भरे पेड़। साथ ही जल की कूहल है। यहाँ पर सरकारी रैस्ट हाउस है। पास ही डॉ. यशवंत सिंह परमार औद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय का भवन है। सेब का बागीचा स्थापित करने के लिये गड्ढे खोदे जा रहे थे।

ताबो से केलांग का रास्ता पूर्णतया पहाड़ी है। एक तरफ ऊँचे पहाड़ और दूसरी ओर स्पिती नदी, जो बहुत नीचे है। लाहौल को जाने वाली बस हमारे से काफी दूर आगे जा रही थी तथा उसके पीछे दो तीन वाहन और देखे। इसका अभिप्राय यह है कि आज आगे का मार्ग खुला है। यंगथंग के पास कुछ देर के लिए रुके। आगे देखा कि बस धीरे-धीरे पहाड़ के साथ-साथ जा रही है और उसके थोड़ा पहले बहुत लोग सड़क के किनारे खड़े बस की ओर देख रहे हैं। वहाँ पहुँचकर पता चला कि बस को चालक खाली ही ले जा रहा था क्योंकि सड़क पर जल का नाला तेज़ी से बह रहा था। यात्री पैदल ही नाला पार कर पुनः बस में बैठ गये थे। यहाँ अक्सर ऐसा होता रहता है।

बस के बाद एक और छोटा वाहन पार पहुँच गया उसके बाद हमारी जीप। उधर से एक बस आई और बड़ी कठिनाई से इधर पहुँची। इतनी देर में जल का बहाव थोड़ा तेज़ हुआ और बस के बोझ से शायद सड़क टूट गई। अब सवारियाँ एक दूसरे का हाथ पकड़कर आने जाने लगीं। पानी बहुत ठंडा और घुटने तक था। हम में से डॉ. अवस्थी, डॉ.डी.पी. शर्मा और ज्ञान ठाकुर भी पार पहुँच गये। मैं और के.डी. वर्मा एक दूसरे का हाथ पकड़, दूसरे हाथ में अपने जूते लिए अभी पानी में घुसे ही थे कि आगे से बड़े जोर की आवाज आई कि पीछे हट जाओ। हमारे आगे वाले रुके तो हमें पीछे हटना पड़ा। तभी देखा कि आगे की सारी सड़क ही पानी से कट गई थी। अपने वाहन तक पहुँचना असंभव था। अब यह रास्ता बहुत दिनों में ठीक

होगा और हमें यहाँ से ही वापस जाना होगा। अत: हम लोग वापस आगये और उस तरफ अपने साथियों को संकेत से विदा दी। यह तो अच्छा हुआ कि उधर वाली बस इधर आ गई थी परन्तु उसकी कुछ सवारियाँ नहीं आ पाई थीं इसलिए चालक ने एक घंटे तक उनकी प्रतीक्षा की और हम सब को बस में आने के लिये कहा और बस चल पड़ी। बस में एक बड़ी विचित्र परन्तु लाभदायक चीज़ देखी जो मैंने अपने लंबे अनुभव में पहली बार देखी थी। कुछ सवारियों के पास खाली डिब्बा देखा। जिसका प्रयोग उन्होंने ने वमन करने के लिए किया और आगे जहाँ बस रुकी, वहाँ उस डिब्बे को धोकर ले आए। जिस तरह हवाई यात्रा में आपकी सीट के आगे लगे पाऊच में लिफ़ाफा होता है। बस ताबो आकर रुकी और सबने खाना खाया और किन्नौर के लिए बस चल पड़ी।

विश्वविद्यालय के रैस्ट हाउस, शारबो में ही हमें रात बितानी पड़ी। चौकीदार हमें देखकर हैरान था, हमने उसे सारी घटना बताई तो बोला, अच्छा हुआ जो उधर से किसी ने आपको चेतावनी दे दी, अन्यथा पता नहीं क्या होता। भगवान का धन्यवाद है, सब ठीक हुआ। आप लोग किस्मत वाले हैं। हम लोग जो कपड़े पहने हुए थे वही पहन कर सोने के अतिरिक्त कोई विकल्प नहीं था। रात लेटे हुए सोचा कि पता नहीं भाग्य में क्या था, जो लाहौल न जा सके।

सवेरे तौलिए हमें मिल गये। चौकीदार ने टुथ पेस्ट पता नहीं कहाँ से लाया होगा। अंगुली से ही पेस्ट कर लिया तथा उसने सिर पर लगाने के लिए सरसों का तेल दिया था। उस दिन शेव भी नहीं कर सके।

नाश्ता करने के बाद सवेरे ही किन्नौर से बस लेकर शाम तक शिमला घर सकुशल पहुँच गये। बिना सामान के देखकर बच्चे हैरान हुए, उन्हें सारा किस्सा बताया कि पहाड़ों में ऐसा भी हो सकता है।

–

102/103, इण्डस एम्पायर, ई-8 एक्स.
भोपाल-462039 (म.प्र.)
मो. 9816136653

बाल पहेलियाँ

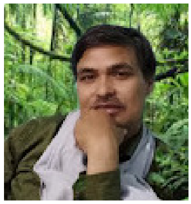

-कमलेंद्र कुमार श्रीवास्तव

1 ऐसा हूँ मैं शास्त्र अनोखा,
रुपए पैसे की नीति बनाता।
कौटिल्य की हूँ रचना प्यारी,
बोलो बच्चो क्या कहलाता।।

2 कश्मीर का इतिहास है जिसमें,
ऐसी हूँ मैं पुस्तक न्यारी।
कल्हण ने लिखा है मुझको,
याद करे ये दुनियाँ सारी।।

3 मेरे पास इक पुस्तक न्यारी,
जिसको पढ़ती दुनिया सारी।
विष्णु शर्मा की रचना प्यारी,
नाम बताओ राज दुलारी।।

उत्तर- 1 अर्थशास्त्र
2 राजतरंगिणी
3 पंचतंत्र

.

राव गंज कालपी ,जालौन
उत्तर प्रदेश पिन 285204
मोबाइल नंबर9451318138
मेल om.saksham@rediffmail-com

चींटियाँ

–रूपाली

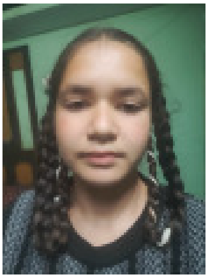

साथ-साथ सदा हैं चलती
एक के पीछे एक
काम सदा ही करती रहतीं
कभी न थकने वाली रेल
मिलकर खाना करती इकट्ठा
अनुशासन में रहती हमेशा ये
इक दूजे का साथ निभाती
अपने से कई गुणा वजन उठाती
चींटी रानी जब देती आदेश
सुनता पूरा चींटी देश
ऐसा है चींटियों का परिवेश।

कक्षा - 10वीं
राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय छम्यार
तहसील बल्ह, जिला मंडी (हिमाचल प्रदेश)-175027

रिश्तों का अहसास

–सारिका

एक बगिया के दो फूल है न्यारे
माँ और बाप के दोनों दुलारे
एक को प्यार करे एक को निहारे
भाई बहन होते हैं सबके प्यारे।

अनोखा है यह रिश्ता प्यारा
भाई बहन का प्यार दुलारा
राखी की यह लाज है रखता
बहन भाई की रक्षा करता।

लड़ते हैं झगड़ते हैं
हँसते हैं हँसाते हैं
रूठते हैं मनाते हैं
इसलिए तो भाई-बहन कहलाते हैं।

अमर रहे यह रिश्ता हमारा
कभी न टूटे प्यार हमारा
जन्म जन्म का साथ निभाएंगे
खुशी के गीत हर पल गाएंगे।

कक्षा - 10वीं
राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय छम्यार
तहसील बल्ह, जिला मंडी (हिमाचल प्रदेश)-175027

तेलणी की धार में बसा देव माहुंनाग का मंदिर –कुमारी आँचल

हिमाचल प्रदेश को देवी-देवताओं की भूमि कहा जाता है। इसी देवभूमि में कई देवी-देवताओं के मंदिर विद्यमान है। इन्हीं में से एक है मंडी जिले के स्यांजी गाँव का देव माहुंनाग जी का प्राचीन मंदिर। सुन्दरनगर से इस मंदिर की दूरी लगभग 12 किलोमीटर है। बताते हैं कि 1927 में स्यांजी गाँव में एक बालक का जन्म हुआ। बालक का नाम परसराम रखा गया। जब बालक लगभग 10 वर्ष का था तो वह अपने मित्रों के साथ अपने घर के निकट के जंगल में खेलने जाने लगा। वहीं उस स्थान पर एक सांप भी रोज आने लगा। वह सांप एक पत्थर के नीचे से निकलता था और बालक रूप में परसराम के साथ खेलता था। यह बात परसराम सबको बताता था लेकिन कोई भी उसका विश्वास नहीं करता था।

फिर एक रात गाँव के एक पंडित को स्वप्न में उस सांप के दर्शन हुए। सांप ने बताया कि लड़का सच कह रहा है। उसकी बात सबको माननी चाहिए। यदि किसी ने लड़के की बात नहीं मानी तो मैं गाँव के हर घर में स्वयं आऊँगा। यदि सबको सच जानना ही है तो तेलणी धार के एक पत्थर के नीचे से मैं फलां दिन निकलूंगा। नियत दिन गाँव वालों को सांप के दर्शन हुए और सबने लड़के की बात को स्वीकारा। फिर यहीं पर एक छोटा-सा मंदिर बनाकर उस सांप को माहुनाग जी के रूप में पूजा जाने लगा। आज भी वह पत्थर मंदिर के एक कोने में विद्यमान है और वहाँ से सांप निकलकर कभी-कभार लोगों को दर्शन देते हैं।

माहुनाग जी का मंदिर जिस हल्की-सी पहाड़ी पर स्थित है, उसे 'तेलणी की धार' कहा जाता है। यहाँ तेलणी नामक एक बड़ा वृक्ष है, जिससे तैलीय छोटी-छोटी बूंदे टपकती रहती हैं। यह बहुत दुर्लभ पेड़ माना जाता है। स्यांजी गाँव के लोग ही नहीं बल्कि अन्य आसपास के गाँव के लोग भी माहुनाग के प्रति आस्था व श्रद्धा प्रकट करने आते हैं। यहाँ पर हर वर्ष 29 जून को मेला लगता है तथा माहुनाग जी का रथ बाहर निकाला जाता है। उस समय लोगों को माहुनाग का नृत्य देखने को मिलता है। जुलाई के महीने में इनका जन्मदिन बड़ी धूमधाम से मनाया जाता है तथा भंडारा भी लगता है। यह स्थान पूरी तरह से देवी-देवताओं के मंदिरों से सजा हुआ है। माहुनाग मंदिर के बिल्कुल साथ ही विद्या का मंदिर अर्थात राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय स्यांजी है वहीं साथ ही माता वैष्णो देवी, शिव भगवान तथा बाला कामेश्वर के सुंदर मंदिर भी हैं। यह पूरा स्थल देवी-देवता के प्रति आस्था व श्रद्धा से परिपूर्ण है।

कक्षा- 12वीं
राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय
स्यांजी तहसील बल्ह,
जिला मंडी (हि. प्र.)- 175027

अद्‌भुत गन्ध बिखेरती कहानियाँ: कस्तूरी मृग –डी. एस. भागटा

पुस्तक:–कस्तूरी मृग (कहानी संग्रह)
लेखक:– सुदर्शन वशिष्ठ
प्रकाशन:–भावना प्रकाशन, 109–ए, पटपड़गंज, दिल्ली–110091
प्रकाशन वर्ष:–2022
पृष्ठ संख्या:–183
मूल्य:–450.00

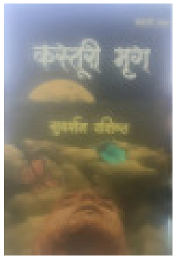

सुदर्शन वशिष्ठ का ताज़ा कहानी संकलन बेबाक भूमिका और लीक से हट कर लिखी कहानियों के कारण आकर्षित करता है। प्राय: किताबों में वरिष्ठ रचनाकारों से भूमिका लिखवाने का चलन रहा है। वशिष्ठ के कहानी संकलनों में कथाकार द्वारा स्वंय भूमिका लिख कर समय के सच को सामने रखा है।

वशिष्ठ द्वारा सन् 1985 में संपादित कथा संकलन 'काले हाथ और लपटें' में लिखी भूमिका बहुत चर्चित रही थी जिस में उस युग के सच को लिखा गया था :

हिमाचली लेखन के राष्ट्रीय धारा से जुड़ने की छटपटाहट इधर जोर पकड़ रही है। लेखन व लेखक का राष्ट्रीय धारा से जुड़ना–ये स्पष्टत: दो बातें हैं। लेखन का व्यापक धारा से जुड़ना, अपनी अहमियत बनाना, एक अलग पहचान कायम करना, एक बात है।

लेखक का राष्ट्रीय स्तर के लेखकों, संपादकों से जुड़ना, उनके साथ उठना–बैठना, मित्रता करना दूसरी बात। दोनों बातें एक दूसरे से इंटरलिंक्ड होंगी, हो सकती हैं। आजकल छपने छपाने का चक्कर इस सम्पर्क साधना से जुड़ा है कुछ हद तक। फिर भी लेखक के बजाए लेखन के बल पर जुड़ना एक उपलब्धि और सार्थक उपलब्धि है मेरे ख्याल में।

ऐसी दूसरी भूमिका इनके कथासंकलन 'नेत्रदान' की है जिसमें कथा यात्रा के हिमाचल व शिमला के संदर्भ महत्वपूर्ण हैं। प्रस्तुत कथा संकलन 'कस्तूरी मृग' की भूमिका अपनी तरह की तीसरी भूमिका है जिसमें कथाकार ने आज के संदर्भ में लेखन के महत्वपूर्ण प्रश्नों को उठाया

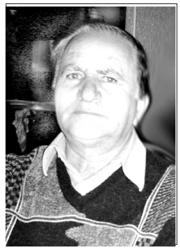

है। यह भूमिका साहित्य जगत में हो रही उथल–पुथल पर बेबाक टिप्पणी करती है। अपनी कथा–यात्रा के माध्यम से कहानीकार ने रचना जगत के भीतरी सच को उजागर किया है। बहुत बार साहित्य की राजनीति, सभी प्रकार की राजनीतियों पर भारी पड़ती दिखाती है। स्थापित साहित्यकारों का वर्चस्व, नवोदित रचनाकारों की छटपटाहट, आपसी गठजोड़, भीतर ही भीतर रचे जाते षड्यंत्र, गोष्ठियों और पत्र–पत्रिकाओं का रहस्यमय संसार प्रारम्भ से ही साहित्य जगत में रहा है जिस का भीतरी सच भूमिका में इस प्रकार उजागर किया गया है :

'पत्रिकाओं में छपना–छपाना, समीक्षा करवाना, पुरस्कार पाना, समारोहों में उपस्थिति, प्रकाशन व्यवसाय, सब में तेजी से बदलाव आया है। पत्रिकाओं की संख्या हजारों में हैं। जैसे लेखकों का पता नहीं चलता, वैसे ही पत्रिकाओं का भी पता नहीं चलता। अब आलम ये है कि पल्ले से पैसे दे कर लोग समारोहों में जाते हैं। ऐसी कई कम्पनियाँ बन गई हैं जो धनराशि ले कर समारोह में बुलाती हैं। प्रकाशकों को रायल्टी दे कर रचनाकार जैसी भी हो, किताब छपवा रहे हैं। खुद ही लेखक हैं, खुद ही खरीदार हैं, खुद ही बांट रहे हैं, खुद ही समीक्षा कर छपवा रहे हैं। खुद की अपनी किताब खरीद बेस्ट सैलर बन जा रहे हैं।

आज सब जल्दी में हैं। जल्दी–जल्दी पत्रिका में छपना, जल्दी में किताब आना, जल्दी में सम्मान पुरस्कार लेना और उसी जल्दी में लुप्त हो जाना, यही नियति है आज के साहित्यकार की।

भूमिका की भान्ति संकलन की कहानियाँ भी लीक से हट कर हैं। अपनी पुरानी कहानियों के कथ्य से हट कर इन कहानियों में कथाकार ने एक निपट नई ज़मीन, नवीन भाषा–शैली को जन्म दिया गया है। विभिन्न पत्रिकाओं में छपते हुए इन कथाओं में नयापन देखा गया जो आम छपने वाली कहानियों से अपने को अलग करती हैं। संकलन

में अलग अलग ज़मीन खोजती सोलह कहानियाँ हैं।

प्रस्तुत संकलन की कहानियों में बहुत कुछ तिस्लिमी और अद्‌भुत लगता है जो आज की कहानियों में देखने को नहीं मिलता। मगर इनकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि ये सभी कहानियाँ आज की समसामयिक समस्यों से जुड़ कर उन्हें उजागर करती जाती हैं। कहानी चाहे सुदूर पर्वत की हो, चाहे घाटी की, बर्फभरी चोटियों की हो, आश्रम की हो या मठ की, अंतत: किसी ताज़ा समस्या पर आ कर ठहर जाती है जो रोज़मर्रा की जिंदगी से जुड़ी हुई होती है। इन कथाओं में महज़ प्राकृतिक सौंदर्य का वर्णन न हो कर बदलते परिवेष में परंपराओं की जकड़न से छटपटाहट, गूढ़ सम्बन्धों की टूटन, मानव मन की ऊहापोह के साथ एक गम्भीर चिंतन दृष्टिगोचर होता है जो कथाकार की परिपक्व सोच और चिंतन का परिचायक है। कुछ कहानियों में गम्भीर मनोवैज्ञानिक विश्लेषण है तो कुछ में मानवीय चिंतन। नवीन भावभूमि क्रिएट कर कथाकार ने अपनी जादूई भाषा-शैली में कहीं बर्फभरी चोटियाँ दिखाई हैं, कहीं उन में गूंजते मन्त्र, कहीं आश्रम संस्कृति की गुनगुनाहट तो कहीं यति जैसे अतिमानवीय व्यक्तित्व की परिकल्पना आज के मीडिया के बीच। सचिवालय के दफ़्तरी माहौल की चालाकियाँ हों, चाहे सरकारी दरबार में हाजिर फरियादी, चाहे सरकार बनाने को आतुर पार्टी वाले, सब का अद्‌भुत चित्रण इन कहानियों में मिलता है।

यति का नंगे पाँव बर्फीली चट्टानों पर चढ़ जाना (येति), लामा दोरजे को एकाएक बाहरी संसार का भान होना (कस्तूरी मृग), चन्द्रा का चट्टान पर झूले से बने घर में रहना, होटेल के प्रांगण में बकरे का कटना (पीला गुलाल, वसंत, पतझड़), हिडिम्बा केव्ज के रहस्य, छितरूराम का हथेली में अंगारे रखना (हथेली में अंगारे), जीतू को नीले अंगूठे में पिता के दर्शन (नाखून में स्याही), मंगू मदारी का कोबरा को पंचसितारा होटेल में छोड़ना (मंगू मदारी), मास्टर मंगल का तिलिस्मी ब्रीफकेस जिसमें बिच्छू से ले कर सांप के निकल आने का भय आदि कुछ ऐसे अनेक विजुअल्ज हैं जो अचंभित करने के साथ सोचने पर मजबूर कर देते हैं।

संकलन की कहानियों मे प्राकृतिक सौंदर्य के बीच मानवता की टीस है, बर्फ के बीच आग है, पत्रकारिता में दाग है तो राजनीति में दाँव है। इन सब के बीच कोरोना काल है जो सब को स्तम्भित कर देता है।

कथाकार ने क्रूर समय को बान्धने के लिए तमाम उपक्रमों को साधा है। उसी के अनुरूप भाषा और शिल्प को बान्धा है। अटैची से निकलते सांप और छछूंदर राजतन्त्र की पोल खोलते हैं तो झोली से निकलती गिद्दड़सिंगी प्रजातन्त्र की। एक गंवार किस्म के इन्सान द्वारा मन्त्री के सामने सड़क किनारे लावारिस ढोर डंगरों का जिम्मा लेने की गुहार हो या सरकार बनाने के लिए हर तरह के हथकण्डे अपनाने का प्रयास हों, सब ओर क्रूर राजनीति का नंगा नाच दिखाई देता है। वर्तमान समाज में टूटते रिश्तों का ताण्डव 'नाखून में स्याही' कहानी में देखने को मिलता है तो मल्टीस्पेशिल अस्पतालों के नाम पर ठगी का माहौल का पर्दाफाश 'पंचरत्न' जैसी कहानी करती है। कोरोना काल में राजतन्त्र के खेल, अस्पतालों की अव्यवस्था, रिश्तों का दरकना, आदमी का आदमी से दूर होना बड़ी शिद्दत से अंतिम दो कहानियों किया गया है। अंतिम कहानी 'मंच पर सन्नाटा' बड़े नाटकीय ढंग से सरकार, व्यवस्था और रिश्तों के एकाएक बदलने और टूटने की दास्तान कहती है। लम्बे केनवास की इस कहानी की सफलता इसी में दिखलाई पड़ती है कि इसे महत्वपूर्ण पत्रिका 'पाखी' के देश विशेषांक (जनवरी-फरवरी 2012) में सर्वोच्च स्थान पर रखा गया।

सुदर्शन वशिष्ठ का प्रस्तुत संकलन अपने कहन की कस्तूरी सब ओर बिखेरता प्रतीत होता है। कस्तूरी की महक पाठक को मोहित करने में सक्षम और सफल हुई है। अपनी अद्‌भुत कहानियों, विशिष्ट भाषा शैली के लिए हिन्दी कहानी में विशेष स्थान हासिल करेगा, ऐसा विश्वास है।

Flat no.C.1002,
Altura Luxury
Aparments,NaglaRoad,
Zirakpur,Pb,140306

साधना से किया साकार, चाँद पर लाजोः –डॉ. विजय कुमार पुरी

कृति : 'चाँद पर लाजो : (कविता संग्रह)
लेखक–विनोद ध्रब्याल 'राही'
प्रकाशनः रुद्रादित्य प्रकाशन,
कालिंदीपुरम्, प्रयागराज
पेपर बैक,
पृष्ठ : 144
मूल्यः 300/-

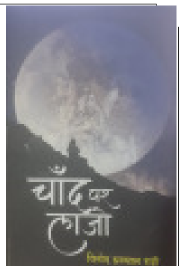

मानव एक सामाजिक प्राणी है। समाज में रहते हुए उसे कई प्रकार के जीवनानुभव होते हैं। सामाजिक पृष्ठभूमि पर गहन चिंतन मनन से कई तथ्यपरक प्रश्न रचनाकार को उद्विग्न करते हैं उद्वेलित करते हैं, तभी तो वह छटपटाता है। यह छटपटाहट उसे तब तक चैन नहीं लेने देती, जब तक उनका कोई सार्थक हल न निकले। वर्णों के विधान से, शब्दों के सुमेल से, भावों की भावधारा से, कल्पना की उड़ान से, यथार्थ के बयान से जन्म होता है एक रचना का, एक कृति का।

जीवन के परिदृश्य को उकेरता कोई भी काव्य जागृति के संग-संग सामाजिक चेतना का कार्य भी करता है। ऐसा ही एक काव्य संग्रह है शिक्षा विभाग में कार्यरत श्री विनोद ध्रब्याल राही द्वारा रचित 'चाँद पर लाजो'।

काव्य संग्रह का नाम जिस कविता के आधार पर हुआ है उसका परिवेश और पृष्ठभूमि आम जनमानस की अन्दर तक झकझोर देने वाली व्यथापूर्ण कहानी है। भूख से बिलखता नंदू लाजो के प्यार की इकलौती निशानी थी, जो अकाल काल कवलित हो जाता है।

'नंदू /ठिठुरता रहा/ ज्येष्ठ की धूप में/ देखते ही देखते/ उसकी देह जम गई / वह बर्फ बन गया/ नहीं मिली हवा भी/ खाने को उस दिन/ इकलौता सहारा/ नंदू मर गया।"

तथाकथित समाज के बड़े-बड़े लोग मजबूर व्यक्तियों का मजाक बनाते हैं पर महसूस नहीं करते उनकी वेदना। तभी तो दन्तकथाओं में सुनी किंवदंतियों से रोटी का प्रबन्ध करना व्यवस्था पर करारा प्रहार है।

'चाँद पर लाजो /सूत कातती, हल चलाती।

अब की बार/ खाली हाथ नहीं उतरेगी धरती पर/ लाएगी चाँद पर से/ जादुई सूत/ जादुई रोटी/ अपने नंदू के लिए।"

भूख, गरीबी, बेकारी की भयावहता दर्शाती कविता 'नन्हें हाथ' झकझोर कर रख देती है कि जिन हाथों में किताबें होनी चाहिए थीं, उनमें विद्या की लकीरें शायद ही किसी को दिखती हैं। वे तो कुछ सिक्के, कुछ नोट या फिर जोरदार तमाचा मारने में ही उलझे रह जाते हैं। वहीं बच्चे सपनों का भार ढोते अपनी उम्मीदों को धराशायी होते देख मन ही मन में घुटते रहते हैं-

'उन हाथों को चाहिए/ स्नेहिल स्पर्श/ पारखी नजरें/ जो करें प्रयत्न/ उनकी लकीरों/ और मजबूरियों को / पढ़ने का।' सच में हृदय को हिलाकर रख देता है।

महिलाओं की जिजीविषा और संघर्ष की कहानी को विनोद राही ने बड़ी संजीदगी से समझा है। 'नन्हीं बच्ची' कविता में नन्हीं बिटिया की चिंता और चिंतन अंदर तक हिला देने में समर्थ हैं -'लोग क्या कहेंगे' कविता में दाम्पत्य सम्बन्धों के खोखलेपन पर चोट की है। राही जी की काव्य नायिकाएँ आक्रोश में तो हैं पर वे प्रतिकार करने में हिचकती हैं तो कवि उनमें आक्रोश की ज्वाला भरने की भरसक कोशिश करता है। 'अवसरवादी' कविता में मजदूरों की बस्ती में एक लड़का कई बार लड़कियों को छेड़ता, उठाने की धमकी देता है तो उसका पिटना नए घटनाक्रम को जन्म देता है। यद्यपि लड़कियों की इज्ज़त हर बार तार-तार होती ही है लेकिन जब लड़कियाँ भी इस गुनाह में शामिल हो जाती हैं तो कवि का अंतर्मन कराह उठता है-

'सभ्य कहलाने वाली/ कॉलेज की लड़कियों ने / मजदूर औरतों और लड़कियों को असभ्य कहते हुए/ फाड़ डाले उनके कपड़े।' पिछले कुछ समय से कोरोना महामारी से त्रस्त रहा पूरा विश्व कवि की पैनी नज़र से नहीं छूटा है। 'भूख की ओर पलायन है/ उन झोंपड़ियों की ओर पलायन है/ जिनकी छतों के बांस/ खड़े कर दिए हैं/ जबरन सीढ़ी बनाकर/ राजमहल की दीवारों के साथ।"

इस भयावह स्थिति के बावजूद कवि आशावान है। कोरोना संकट से जूझते हुए भी आस की डोर नहीं छोड़ना ही कवि का अभिप्रेय है–

'खुलेंगे कपाट मंदिरों के/ आज़ाद होगा ईश्वर/ उतर जाएगा सिर से/ क्वारन्टीन और लॉकडाऊन/ प्रेतों का साया।"

'बताओ तो' कविता में तीन प्रकार की मानसिकता लिए चरित्र वर्णित हैं। तीनों भूख से बेहाल अपने अपने हिसाब से, तरीके से अपना अपना पेट भरते हैं।

आज विडम्बना यह है कि चुप रहना आदमी की नियति बन गई है और जो कोई आवाज उठाता है तो सत्तासीन शक्ति उसे चुप करवा देती है।

'चीख' कविता की संवेदना में कवि शुरुआती दौर में बहुत आक्रामक रुख अपनाकर व्यवस्था के प्रति अत्यंत आक्रोशित है। वह परिवर्तन के लिए जी जान से चीखता चिल्लाता है। परन्तु धीरे धीरे उसे लगता है कि अपना हित निकल जाने के बाद सब अपने में ही मस्त और व्यस्त रहते हैं। 'सांप', 'अभिवादन', 'बाँसुरी', 'जीवन का सच', 'वे अछूत हैं' आदि उनकी व्यंग्यात्मक कविताएँ हैं।

कवि ग्राम्य परिवेश से सम्बंधित है तो प्रकृति और पर्यावरण को उसने बड़ी नजदीकी से देखा है। शहरीकरण के बढ़ते प्रभाव से हो रही आपदाओं, घटनाओं ने कवि को झकझोर के रख दिया है। गाँव की भोर चिड़ियों के चहकने से आनन्दमयी वातावरण तैयार कर देती है।

'नदी', 'प्रकृति' आदि कविताओं में कवि ने प्रकृति का वर्णन बड़ी संजीदगी से किया है।

माँ के लिए समर्पित कविताएँ बहुत ज़रूरी हैं और पिता होना आसान नहीं तो पिता कर्तव्यनिष्ठता और ज़िम्मेदारियों का एक सुरक्षा कवच है।

मेरे जीवन को आवश्यकता थी आकार की/ तुमने कुम्हार बन/ प्रेम की तरलता में हाथ भिगोकर/ शुरू किया था देना आकार/ मेरे व्यक्तित्व को।"

भगवान राम के अस्तित्व पर प्रश्नचिन्ह लगाने वाले विधर्मियों से तथ्यपरक तर्क रखते हुए कवि कहता है कि राम काल्पनिक नहीं अपितु आदर्श और मर्यादा का पाठ पढ़ाने वाले हैं।

वस्तुतः कवि ने आधुनिकता की रंगत में रंगी चेतना व मानवीय मूल्यों संग समाज में फैली नफरत, भ्रष्टाचार व कुरीतियों पर कड़ा प्रहार किया है। काव्य रचना का प्रवाह आज के समाज की विसंगतियों को दर्शाता है, जिसमें कवि के मन की पीड़ा भी अनायास ही छलक उठी है। इन कविताओं में कवि ने पर्यावरण और प्रकृति के प्रति अपनी गहरी सोच का परिचय दिया है। इसमें प्रकृति के प्रति असीम प्रेम व पर्यावरण संरक्षण की झलक भी स्पष्ट दिखा देती है। इसमें जरा भी संदेह नहीं है कि काव्य रचना कवि की अमिट साधना को साकार करती हुई मानवता के साथ सामंजस्य बिठाती हुई प्रतीत होती है।

काव्य रचना जीवन की उन कल्पनाओं को साकार करती है जिन तक व्यक्ति अपनी पहुँच भी नहीं बना सकता। कवि कविताओं के सहारे कल्पनाओं के सागर में गोते लगाकर अमूल्य विचारों को साकार रूप में प्रस्तुत करने का माद्दा रखता है। मुझे यह कहते हुए गर्व महसूस हो रहा है कि वर्तमान परिस्थितियों व जीवन के अनेक परिवर्तनों से संबंध रखने वाली कविताएँ जिनको काव्य संग्रह 'चाँद पर लाजो' में संग्रहीत किया गया है, अपने आप में बेजोड़ हैं।

भावना–संवेदना से भरा रुद्रादित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित यह अठसठ कविताओं का काव्य संग्रह सरल, सहज एवं सुगम भाषा में रचा गया है और प्रकृति, प्रेम व लोक जीवनदर्शन को समेटे हुए है। कई प्रकार के नए प्रतीकों और बिंबविधान से भावों के अनुकूल भाषा का प्रयोग कर एक चेतना जगाने का कार्य भी कवि ने किया है। आम जनमानस का आक्रोश, प्रकृति का यथार्थ अंकन, नित नवीन भावनुभूतियों को समेटे यह काव्य संग्रह हिंदी साहित्य के लिए एक मील का पत्थर साबित होगा।

मैं आशा करता हूँ कि कवि अपनी काव्य साधना को जिस तरह निर्माण की तरफ लगाता हुआ अपनी कविताओं द्वारा नवीन संदेश जन–जन तक पहुँचाने का प्रयास कर रहा है, वह उसी प्रक्रिया को आगे ले जाते हुए अपने लक्ष्य में सफल हो। इस काव्य संकलन के लिए श्री विनोद ध्रब्याल राही जी को बहुत बहुत बधाई और अगली कृति के इंतज़ार में।

ग्राम पदरा पोस्ट ऑफिस हंगलोह
तहसील पालमपुर जिला कांगड़ा
हिमाचल प्रदेश 176059
मोबाइल 7018516119

क्षेत्रीय सहयोगी

1. Dr. L.C. Sharma, IIRD Complex,
Bye-pass Road, shanan,
Sanjauli, Shimla-6 (H. P.)
mo. 09418014761
iirdsml@gmail.com

2. अंजना छलोत्रे 'सवि',
द्वारा श्री विजय देशमुख, माधव कालोनी,
सोडलपुर रोड, टिमरनी, जिला हरदा -461228
(म.प्र.) मो. 08461912125
anjana.savi@gmail.com

3. श्री कृष्ण चन्द्र महादेविया
गाँव महादेव, तह. सुन्दर नगर,
मण्डी (हि.प्र.) 175018

4. डॉ. विजय पुरी, ग्राम
पदरा, डा. हंगलोह, त. पालमपुर, कांगड़ा (हि. प्र.)
7018516119, 9816181836

5-श्रीमती शिवा धरावेश,
20/7, दुर्गा कालोनी तरुवाला, पाँवटा साहिब,
जि. सिरमोर-173025 (हि.प्र.)
मो. 08894892999

6. चन्द्रभूषण तिवारी
ग्राम टी.टी.अब्दलपुर, डाकघर हरिसेन गंज,
(मऊआईमा) प्रयागराज-212507
मो. 9415593108, 8707467102
cbtiwari04091966@gmail.com

7. दिनेश पाठक 'शशि'
28, सारंग विहार, रिफ़ाइनरी नगर,
मथुरा- (उत्तर प्रदेश) 9412727361,
ईमेल- drdinesh57@gmail.com

8. श्रीमती पूर्णिमा ढिल्लन
फ्लैट नं.-401, बिल्डिंग-5, अशोक अस्टोरिया,
गोवर्धन विलेज, गंगापुर रोड, नासिक-422222,
मो. 7767943298

9. Dr. A. J. Abraham,
ANCHANIYIL A.K.G. Unichira road,Changampuzha nagar, post-Kochi-33', Kerala. mo. 9447375381

10- Dr. Sumangala Mummigati
'Chinmay' 4th Cross, Shreepad Nagar, Near Rani Chennamma Nagar, Dharwad, Karnatak. mo-7619164139

11. डॉ. परमानन्द तिवारी (प्राचार्य)
शास. तुलसी महाविद्याल अनूपपुर,
जिला अनूपपुर (म.प्र.) मो. 9424931012
Email...hegtdcano@mp.gov.in

Dr.Sheena Eapen,
House No.2, Alphonsa Meadow, sThekkemala P.O Kozhencherry, Pathanamthitta, Kerala-689654

पंजाब प्रेस क्लब जालन्धर में आयोजित पंजाब कला संस्कृति अकादमी के वार्षिक कार्यक्रम में पंजाब के सुप्रसिद्ध कहानीकार श्री सुरेश सेठ जी द्वारा पंजाब के ख्यातिलब्ध साहित्यकारों की उपस्थिति में शैल सूत्र की सम्पादक श्रीमती आशा शैली को उनकी साहित्यिक सेवाओं के लिए सम्मानित किया गया।

पंजाब प्रेस क्लब जालन्धर में आयोजित पंजाब कला संस्कृति अकादमी के वार्षिक कार्यक्रम में हल्द्वानी (उत्तराखण्ड) की साहित्यकार श्रीमती बीना भट्ट बड़सिलिया को उनकी साहित्यिक सेवाओं के लिए सम्मानित किया गया।

पंजाब प्रेस क्लब जालन्धर में आयोजित पंजाब कला संस्कृति अकादमी के वार्षिक कार्यक्रम में खटीमा (उत्तराखण्ड) के साहित्यकार श्री राम रतन यादव को उनकी साहित्यिक सेवाओं के लिए सम्मानित किया गया।

पत्रिका पंजीकरण संख्या – TELHIN/2008/30044

**माननीय मुख्यमंत्री उत्तराखण्ड
श्री पुष्कर सिंह धामी जी
द्वारा टनकपुर में प्रथम पुस्तक मेले के अवसर पर
खटीमा के साहित्यकार डॉ. रूपचन्द्र शास्त्री ‘मयंक’ की
पाँच पुस्तकों का विमोचन किया गया।
इस अवसर पर उत्तराखण्ड के अनेक साहित्कार उपस्थित रहे।**

पंजाब प्रेस क्लब जालन्धर में आयोजित पंजाब कला संस्कृति अकादमी के वार्षिक कार्यक्रम में अकादमी की सचिव डॉ. पूजा जी को उत्तराखण्ड के साहित्यकारों की ओर से उत्तराखण्ड का सौभाग्य चिन्ह पिछौड़ा देकर सम्मानित किया गया

टनकपुर के पुस्तक मेले में हिन्द युग्म प्रकाशन के स्टॉल से शैल सूत्र की सम्पादक श्रीमती आशा शैली जी पुस्तकें खरीदते हुए

पंजाब प्रेस क्लब जालन्धर में आयोजित पंजाब कला संस्कृति अकादमी के वार्षिक कार्यक्रम में लुधियाना में कार्यरत डॉ. राजेन्द्र सिंह साहिल उत्तराखण्ड के साहित्यकारों को अपनी पुस्तकें भेंट करते हुए।